# राजस्थान में
# नागरिक समाज एवं तृणमूल स्तर के आन्दोलनों
# के साथ संवाद कर
# वन अधिकार कानून के कार्यान्वयन को सुगम करना

## 1. भूमिका

राजपुताना की रियासतों के एकीकरण की पाँच चरणों की प्रक्रिया में अजमेर (राजपुताना में ब्रिटिश शासन की गद्दी) को सम्मिलित करने के साथ ही राजस्थान राज्य का उद्‌भव हुआ; अजमेर को मध्य प्रान्त से निकाल कर राजस्थान में शामिल किया गया था।[1] राजस्थान के उत्तर से दक्षिण को जाती अरावली पर्वतमाला इस क्षेत्र की पारिस्थितिकी की प्रमुख निर्धारक संरचना है (रेखाचित्र–1)। ऑस्कर जॉर्ज ड्रूड (1852–1933) ने इसे दक्षिण पश्चिम एशिया/फारसी–अरबी तथा भारतीय–मलायी वानस्पतिक तत्त्वों की विभाजक रेखा कहा था; यह ड्रूड–रेखा के नाम से भी जानी जाती है (रेखाचित्र–2)। वी.एम. मेहर होमजी के अनुसार, '"भारतीय–मलायी" एवं "फारसी–अरबी" वनस्पतियों के बीच की विभाजक रेखा के बारे में साहित्य की समीक्षा की गई.......... सागौन या विविध प्रजातियों के जंगल जो पहाड़ियों पर मिलते हैं, उनमें भारतीय–मलायी एवं भारतीय तत्त्वों की प्रधानता है किन्तु उत्तरी गुजरात एवं राजस्थान के रेतीले जलोढ़ मैदानों में *प्रोसोपिस, साल्वाडोरा, अकेशिया, कप्पारिस, यूफ़ोरबिया* के झुरमुटों या छितरी हुई झाड़ियों में पश्चिमी तत्त्व सुस्पष्ट है।'[2]

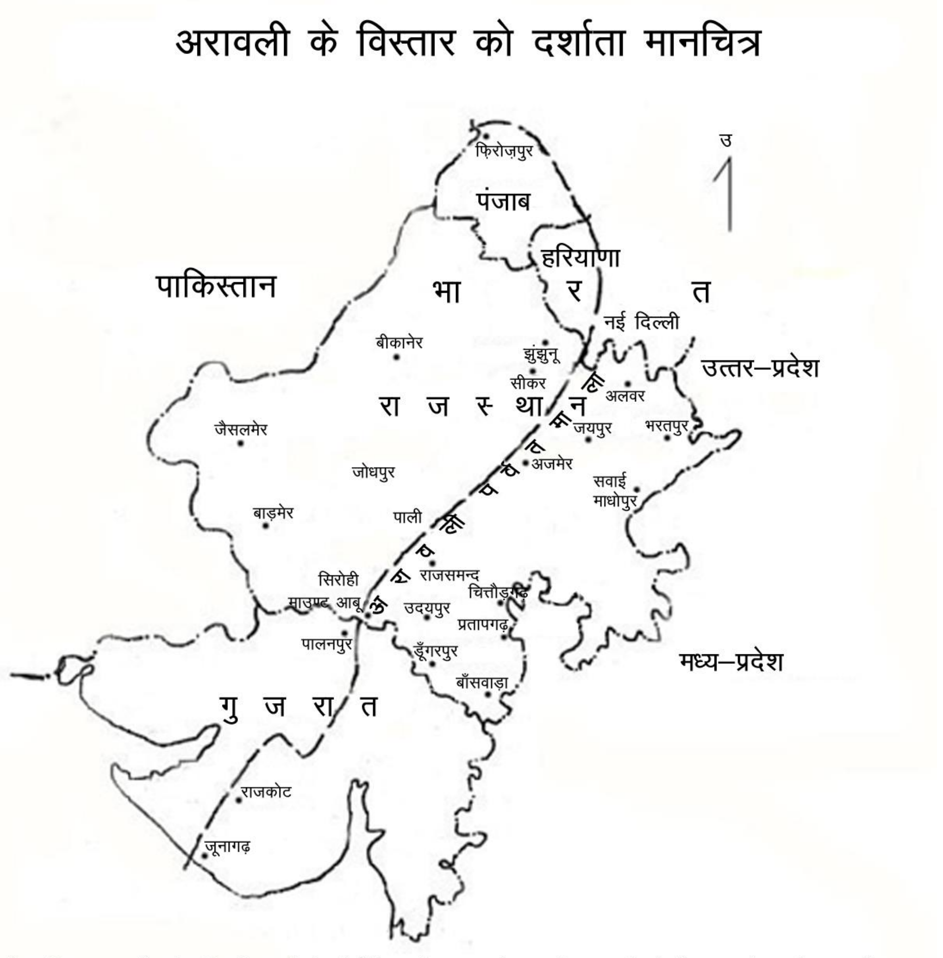


**रेखाचित्र–1:** पूर्वी एवं पश्चिमी तत्त्वों के भौगोलिक विभाजक के रूप में अरावली के विस्तार को दर्शाता मानचित्र।

---

1 'इण्टिग्रेशन ऑफ द इण्डियन स्टेट्स', वी.पी. मेनन.

2 'सम फाइटोजियोग्राफिक आस्पैक्ट्स ऑफ राजस्थान, इण्डिया', वी.एम. मेहर–होमजी, दिसम्बर 1970, वॉल्यूम 21, इश्यू 4, पृष्ठ 245–254, वेजेटाशियो.

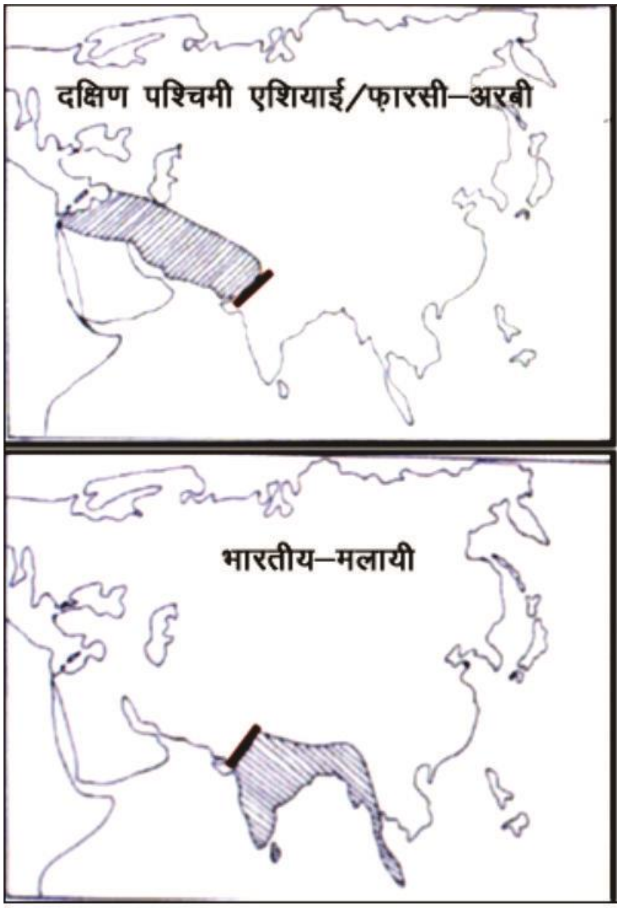


**अरावली पर्वतमाला : ड्रूड रेखा**

- ड्रूड (1890–1913) के अनुसार–अरावली पर्वतमाला, फारसी–अरबी एवं भारतीय–मलायी वानस्पतिक तत्त्वों की विभाजक रेखा है और यह दक्षिण की ओर खम्भात की खाड़ी तक जाती है।
- अरावली के पश्चिमी हिस्से में, पश्चिमी या फारसी–अरबी तत्त्व (भूमध्यसागरीय, दक्षिण–पश्चिम एशियाई एवं अफ्रीकी) पूर्वी या भारतीय–मलायी तत्त्वों पर हावी हैं। अरावली पर्वतमाला में और उसके पूर्वी हिस्से में समानुपातिक रूप से पश्चिमी तत्त्वों की तुलना में पूर्वी तत्त्व अधिक हैं।
- अतः, ड्रूड रेखा अरावली के पश्चिमी पार्श्व के साथ चलती है; यही वह क्षेत्र है जहाँ पूर्वी एवं पश्चिमी वानस्पतिक तत्त्वों के मध्य बदलाव होता है।

**रेखाचित्र–2:** दक्षिण–पश्चिम एशियाई / फारसी–अरबी तथा भारतीय–मलायी वानस्पतिक तत्त्वों को अलग करती ड्रूड रेखा।

*चित्र स्रोतः* 'गुजरात में अरावली की जैव विविधता' पर प्रेज़ेण्टेशन, डॉ. लीना गुप्ता, जयपुर, फरवरी 2013.

प्रो. एस.एस. ढाबरिया ने अस्सी के दशक में प्रकाशित अपनी दो विशिष्ट कृतियों[3] में बताया था कि किस प्रकार से अरावली में वनों के विनाश से रेगिस्तान का प्रसार हो रहा है और उन्होंने रेगिस्तान की इस बढ़त को रोकने के लिए कार्ययोजना प्रस्तावित की थी। तब रेत के धोरों का स्थिरीकरण, *प्रोसोपिस ज़ूलिफ़्लोरा* के बीजों को वायुयान से बिखेरना व अन्य कार्यक्रम शुरू किए गए जिनसे रेगिस्तान का विस्तार कुछ सीमा तक रुका, किन्तु पहाड़ी ढलानों पर बड़े पैमाने पर इस नई प्रजाति के आक्रमण और घुसपैठ की कीमत स्थानीय प्रजातियों को चुकानी पड़ी।

अरावली पर्वतमाला, अरब सागर और बंगाल की खाड़ी में गिरने वाली नदियों की जल–विभाजक रेखा भी है। अरावली के जल संसाधनों का दोहन शहरीकरण और विकास की प्रक्रियाओं के लिए किया जाता रहा है। अरावली में एक अन्य प्रमुख गतिविधि खनन है, जो कि 2006 में एक निर्णायक मोड़ पर जा पहुँची जब सर्वोच्च न्यायालय ने अरावली पर्वतमाला में सभी प्रकार के खनन पर 15 दिन के लिए रोक लगा दी। हालाँकि, उसके

---

3 'डैज़र्ट स्प्रैड एण्ड डैज़र्टिफिकेशन – एन एनालिसिस ऑफ आइडेण्टिफाईड अरावली गैप्स ऑन द डैज़र्ट फ्रिन्ज' तथा 'ईको–क्राइसिस इन द अरावली हिल रीजन – चेन्जिंग एनवायरमैण्टल स्टेटस एण्ड प्रपोज़्ड रेमेडियल मैजर्स फॉर इट्स रीजनरेशन'.

बाद खनन फिर से शुरू कर दिया गया किन्तु इसके पुनः आरम्भ होने के तरीके पर कई प्रश्न खड़े हुए जो अब तक अनुत्तरित हैं।

**तालिका–1** में अरावली के पूर्वी भाग की वन भूमि का विवरण दिया गया है। इस क्षेत्र में स्थित 75 प्रतिशत वन भूमि व 84 प्रतिशत सघन वन तथा पास के दो ज़िलों सिरोही व पाली में 11 प्रतिशत सघन वन होने से अरावली एक अवरोध के रूप में महत्त्वपूर्ण जीवनप्रद भूमिका अदा करती है; अतः अरावली के साथ जो कुछ भी होता है वह राजस्थान के लोगों के जीवन, निवास एवं स्वास्थ्य को सीधा प्रभावित करता है (अधिक जानकारी के लिए देखें अनुलग्नक–1, 2 व 3)। बाड़मेर/जैसलमेर में विशाल खुला वन एवं झाड़–झंखाड़ वाली भूमि है जिसे डैज़र्ट नैशनल पार्क के नाम से जाना जाता है (अनुलग्नक–4)।

**तालिका–1: अरावली के पूर्वी भाग में वन क्षेत्र का विवरण**

| राजस्थानः अरावली के पूर्व में वन क्षेत्र का प्रतिशत | | | | |
|---|---|---|---|---|
| **क्र.सं.** | **अरावली के पूर्व में स्थित ज़िले** | **वन क्षेत्र (वर्ग किलोमीटर)** | **अरावली के पूर्व में स्थित कुल वन क्षेत्र का प्रतिशत** | **अरावली के पूर्व में स्थित कुल सघन वन क्षेत्र का प्रतिशत** |
| 1. | अजमेर | 618.4419 | 2.50 | 0.76 |
| 2. | अलवर | 1783.6148 | 7.21 | 8.76 |
| 3. | बाँसवाड़ा | 1006.3866 | 4.07 | 1.85 |
| 4. | बाराँ | 2239.6901 | 9.05 | 3.31 |
| 5. | भरतपुर | 434.9344 | 1.76 | 0.69 |
| 6. | भीलवाड़ा | 779.6888 | 3.15 | 0.76 |
| 7. | बूँदी | 1557.3335 | 6.29 | 3.25 |
| 8. | चित्तौड़गढ़ | 1793.4145 | 7.25 | 13.23 |
| 9. | दौसा | 284.4934 | 1.15 | 0 |
| 10. | धौलपुर | 638.3859 | 2.58 | 1.82 |
| 11. | डूँगरपुर | 692.7533 | 2.80 | 0.98 |
| 12. | जयपुर | 945.6630 | 3.82 | 2.82 |
| 13. | झालावाड़ | 1349.7943 | 5.45 | 1.85 |
| 14. | करौली | 1810.0470 | 7.31 | 0 |
| 15. | कोटा | 1322.4592 | 5.34 | 3.4 |
| 16. | प्रतापगढ़ | 1666.3071 | 6.73 | 0 |
| 17. | राजसमन्द | 401.2779 | 1.62 | 2.91 |
| 18. | सवाई माधोपुर | 952.8829 | 3.85 | 5.6 |
| 19. | टोंक | 330.0466 | 1.33 | 0.73 |
| 20. | उदयपुर | 4142.3344 | 16.74 | 31.58 |
| | **कुल** | **24749.9496** | **100.00** | **84.30** |

राजस्थान की जनसाँख्यकी से ज्ञात होता है कि भारत की कुल भूमि का 10.4 प्रतिशत, आबादी का 5.5 प्रतिशत, मवेशियों का 10.3 प्रतिशत, खाद्यान्न उत्पान का 5.49 प्रतिशत, तिलहन उत्पादन का 21.3 प्रतिशत तथा जल स्रोतों का 1.7 प्रतिशत राज्य के पास है। स्पष्ट है कि राजस्थान अपनी भूमि से जुड़े संसाधनों का जो प्रभावी उपयोग कर पाया है उसमें पशुपालन की केन्द्रीय भूमिका रही है। ऐतिहासिक रूप से इस क्षेत्र में रेगिस्तान से मध्य–प्रदेश के वन चारागाहों तक मवेशियों के प्रवास के तीन प्रमुख मार्ग थे जो उदयपुर, अजमेर व करौली से हो कर गुज़रते थे। निजीकरण को बढ़ावा देने के व्यवस्थित कार्यक्रम के तहत चरागाहों का विनाश किया गया जिसके परिणामस्वरूप चरवाहों के लिए संकट आ खड़ा हुआ है। आरक्षण के लिए गुर्जरों का आन्दोलन दिखाता है कि कभी समृद्ध रहा यह समुदाय राज्य के विकास की प्रक्रिया में किस प्रकार हाशिए पर चला गया है।

दक्षिण राजस्थान एवं इस इलाके के वन क्षेत्रों की कहानी कुछ अलग है। जैसा कि राजस्थान के वनों की साँख्यिकी से स्पष्ट है कि वन इस इलाके में भू–उपयोग के प्रमुख प्रकारों में से एक है। यदि हम उत्तरी राजस्थान के मीनाओं को सम्मिलित नहीं करें (जिन्हें राज्य की जनजातियों की सूची में ग़लत जोड़ा गया), तो जनजातियों की आबादी इसी इलाके में केन्द्रित है। एन.टी.एफ.पी. (इमारती लकड़ी रहित वन उत्पाद) पर निर्भरता उनके जीवन के लिए सहायक प्रणाली का अभिन्न हिस्सा है।

फरवरी, 2013 में एस.पी.डब्ल्यू.डी. ने वसुन्धरा और कल्पवृक्ष के सहयोग से जयपुर में वन अधिकार कानून (एफ.आर.ए.) पर दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया। चर्चा में निम्नलिखित बिन्दु उभर कर आए[4]:

क. वन अधिकार कानून के कार्यान्वयन की प्रगति धीमी रही है। कर्मचारियों की कमी व अन्य सीमाओं के बावजूद जनजातीय विभाग ने इस प्रक्रिया में नागरिक समाज को जोड़ने के महत्त्व को समझा ही नहीं तथा विभाग यही मानता रहा कि वह जो प्रक्रिया अपना रहा है उसी से अच्छे परिणाम प्राप्त होंगे।

ख. कार्यशाला में समूह चर्चा के निष्कर्षों में बताया गया कि वन विभाग के द्वारा कई अनियमितताएँ की गई हैं जैसे कि महानरेगा की राशि का उपयोग कर दीवारें बनाई गईं और लोगों को वनों से अलग कर दिया गया जो कि वन अधिकार अधिनियम का उल्लंघन है तथा अभयारण्य की सीमा पर होटलों द्वारा निर्माण किया जा रहा है।

ग. वन विभाग के प्रतिनिधि ने बताया कि विभाग स्वयं अपना मालिक नहीं है और कई मामलों में वन विभाग को राज्य सरकार के निर्देशों पर ही चलना पड़ता है।

घ. एक ओर आजीविका के लिए इमारती लकड़ी रहित वन उत्पाद (एन.टी.एफ.पी.), औषधीय पौधे और जैव विविधता की प्रासंगिकता तथा दूसरी ओर वन अधिकार अधिनियम के सन्दर्भ में टिकाऊ वन प्रबन्धन पर प्रकाश डाला गया।

4 वर्कशॉप रिपोर्ट मिनिट्स, एस.पी.डब्ल्यू.डी. के जुनैद ख़ान कोमल द्वारा ईमेल से प्रसारित – विस्तृत विवरण के लिए देखें अनुलग्नक–5.

## 2. राजस्थान में वन अधिकार अधिनियम के कार्यान्वयन की स्थितिः

### 2.1 कार्यान्वयन की प्रगतिः[5]

- 16 ज़िलों में दावे दायर किए गए हैं[6]
- कुल दायर दावेः 70496
- स्वीकृत दावेः 35741 (50.70 प्रतिशत)
- अस्वीकृत दावेः 32786 (46.50 प्रतिशत)
- विचाराधीन दावेः 1969 (02.80 प्रतिशत)
- अधिकार पत्र जारीः 35716 (व्यक्तिगतः 35647, ग़ैर वानिकी उद्देश्यों से सामुदायिक अधिकारः 69)
- कुल स्वीकृत क्षेत्रः 22138.343 हैक्टर

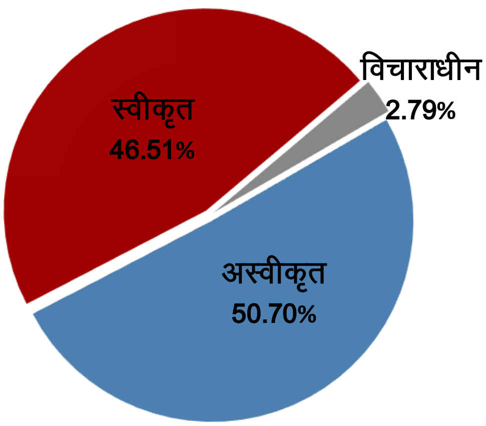


**रेखाचित्र–3:** कुल प्रस्तुत दावों पर प्रगति का समानुपात।

कुल दायर सामुदायिक दावों में से लगभग 10.5 प्रतिशत ही स्वीकृत किए गए हैं, जबकि 63.6 प्रतिशत दावों को अस्वीकृत कर दिया गया है और करीब 25.8 प्रतिशत दावे विचाराधीन हैं। (कुल 99.9 प्रतिशत होता है)

राज्य स्तरीय डाटा की रिपोर्ट में सभी सामुदायिक दावों को एक साथ दर्शाया गया है और सामुदायिक वन अधिकार {धारा 3(1)} व सामुदायिक अधिकार {धारा 3(2)} में दायर दावों की अलग–अलग जानकारी नहीं दी गई है।

आधिकारिक अभिलेखों के अनुसार, जनवरी 2016 तक 8 ज़िलों (बाँसवाड़ा, डूँगरपुर, उदयपुर, सिरोही, बाराँ, पाली, भीलवाड़ा व कोटा) में 654 सामुदायिक दावे (जिनमें सामुदायिक अधिकार एवं सामुदायिक वन अधिकार दोनों शामिल हैं) दायर होना बताया गया है, किन्तु 6 ज़िलों के केवल 69 (सामुदायिक अधिकार) दावों को वास्तव में स्वीकृत किया गया है।

ग़ौरतलब है कि यदि ज़िलेवार जानकारियों के अनुसार चलें तो सामुदायिक दावों की जो संख्या बताई गई है वह सन्देहास्पद है, उदाहरण के लिए डूँगरपुर ज़िले के ज़िला स्तरीय डाटा[7] (तहसीलवार डाटा) में 352 सामुदायिक दावे (सभी सागवाड़ा तहसील में) दायर होना बताया गया है तथा इनमें से केवल 10 दावों (सामुदायिक अधिकार) को स्वीकृत किया गया है, जबकि शेष को पर्याप्त प्रमाणों के अभाव में ग्राम सभा के स्तर पर अस्वीकृत कर दिया गया; इसके विपरीत राज्य स्तरीय डाटा में डूँगरपुर ज़िले में केवल 10 सामुदायिक दावे दायर होना व सभी स्वीकृत होना बताया गया है।

इसके साथ ही, बाँसवाड़ा, डूँगरपुर (10 सामुदायिक दावे ही मानें), पाली व भीलवाड़ा में दायर सभी सामुदायिक दावे स्वीकृत कर लिए गए जबकि उदयपुर (54) व कोटा (5) और बाराँ (110) के कुछ भाग के दावे विचाराधीन रखे गए हैं। सर्वाधिक दावे सिरोही और बाराँ में अस्वीकृत किए गए, जो कि सम्बन्धित ज़िलों में कुल स्वीकृत दावों का क्रमशः 99.65 प्रतिशत और 52.9 प्रतिशत हैं (डूँगरपुर के मामले का वर्णन ऊपर किया जा चुका है)।

---

5 अनुलग्नक–6 : एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन की प्रगति रिपोर्ट (जनवरी 2016), जनजाति आयुक्त राजस्थान, उदयपुर.

6 एफ.आर.ए. सम्बन्धी डाटा की ज़िलेवार सूची में अरावली के पूर्व की ओर के जो ज़िले शामिल नहीं हैं, वे हैं अजमेर, अलवर, भरतपुर, दौसा, धौलपुर व करौली. इन ज़िलों में 5,569.92 वर्ग किलोमीटर वन क्षेत्र है जो कि राजस्थान राज्य के कुल वन क्षेत्र का 17.32 प्रतिशत है. अरावली के पश्चिम की ओर के पाली व सिरोही ज़िलों को उस सूची में शामिल किया गया है जिसमें एफ.आर.ए. सम्बन्धी डाटा दिया गया है.

7 डूँगरपुर ज़िला स्तरीय वन अधिकार अधिनियम प्रगति रिपोर्ट (30 सितम्बर 2014).

अस्वीकृत दावों की समीक्षा की प्रक्रिया बेपरवाही से संचालित की जा रही है।

अब तक केवल 22138.343 हैक्टर वन भूमि ही स्वीकृत की गई है जबकि 2011 के राजस्थान के जनसाँख्यकी डाटा के अनुसार देने योग्य न्यूनतम क्षेत्र (वनों की स्थिति की रिपोर्ट–1999 में वर्णित मानदण्ड) 2575445.78 हैक्टर है।[8]

राज्य में कुल वैधानिक वन क्षेत्र 3274448.80 हैक्टर है।

वन अधिकार अधिनियम के तहत अब तक स्वीकृत क्षेत्र राज्य के कुल देने योग्य न्यूनतम क्षेत्र का 0.86 प्रतिशत और कुल वैधानिक वन क्षेत्र का 0.68 प्रतिशत मात्र है।

### 2.2 अनुसूचित क्षेत्र में वन अधिकार अधिनियम की प्रगति:

दक्षिणी राजस्थान के पाँच ज़िले – बाँसवाड़ा, डूँगरपुर (पूर्णतः जनजातीय) व उदयपुर, चित्तौड़गढ़ (प्रतापगढ़) व सिरोही (आँशिक जनजातीय) – पाँचवीं अनुसूची के प्रावधानों के तहत अनुसूचित क्षेत्र के रूप में सूचीबद्ध हैं।

अनुसूचित ज़िलों के गाँवों की राजस्व सीमा में वन क्षेत्र (देने योग्य न्यूनतम क्षेत्र) 703365.86 हैक्टर है जो कि राज्य के कुल देने योग्य न्यूनतम क्षेत्र का 25.88 प्रतिशत है।

अब तक अनुसूचित क्षेत्रों में एफ.आर.ए. की स्वीकृति 20473.979 हैक्टर में हुई है, जो कि राज्य के कुल स्वीकृत क्षेत्र का बड़ा भाग (92.48 प्रतिशत) है। वहीं, एफ.आर.ए. के तहत अनुसूचित क्षेत्रों के अपने सामूहिक देने योग्य न्यूनतम क्षेत्र में से स्वीकृत क्षेत्र का प्रतिशत मात्र 2.91 प्रतिशत है।

### 2.3 व्यक्तिगत वन अधिकार और सामूहिक वन अधिकार के तहत जारी अधिकार पत्रों का विवरण:

राज्य में जनवरी 2016 तक कुल 70496 दावे दायर किए गए थे, जिनमें से 35741 दावे स्वीकृत किए गए और 35716 दावों में अधिकार पत्र जारी किए गए। अधिकार पत्रों में स्वीकृत क्षेत्र का श्रेणीवार विवरण निम्नलिखित है:–

**क. व्यक्तिगत वन अधिकार पत्र**

- अधिकार पत्र जारी – 35647
- स्वीकृत भू–क्षेत्र – 21943.05 हैक्टर
- प्रति अधिकार पत्र स्वीकृत औसत क्षेत्र – 0.61 हैक्टर

**ख. सामुदायिक अधिकार पत्र**

- अधिकार पत्र जारी – 69
- स्वीकृत भू–क्षेत्र – 195.293 हैक्टर
- प्रति अधिकार पत्र स्वीकृत औसत क्षेत्र – 2.83 हैक्टर

---

8 अनुलग्नक–7 – राजस्थान के गाँवों में ज़िलेवार वनों का भू–उपयोग–2011 (एवं 2001 व 1991 से तुलना).

### ग. कुल अधिकार पत्र

- अधिकार पत्र जारी – 35716
- स्वीकृत भू–क्षेत्र – 22138.343 हैक्टर
- प्रति अधिकार पत्र स्वीकृत औसत क्षेत्र – 0.62 हैक्टर

## 2.4 स्थिति की समीक्षा

**2.4.क कार्यान्वयन करने वाले ज़िलों में कोई परिवर्तन नहीं:** वन अधिकार अधिनियम के कार्यान्वयन को रिपोर्ट करने वाले ज़िलों की संख्या में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। राज्य के 16 ज़िलों के पास उन दावों के अभिलेख हैं जो दायर किए गए जबकि शेष 17 ज़िलों के पास इसका कोई हिसाब नहीं है।

**2.4.ख राज्य के डाटा में कोई परिवर्तन नहीं:** राज्य में ग्राम सभा के स्तर पर प्राप्त दावों की संख्या में जुलाई, 2014 से नवम्बर 2015[9] के बीच कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। ग्राम सभा के स्तर पर प्राप्त दावों की संख्या में ज़िला स्तर पर भी कोई परिवर्तन नहीं हुआ है, यद्यपि अधिकार पत्रों की स्वीकृति एवं क्षेत्र की स्वीकृति में परिवर्तन हुआ है। इस तथ्य से दो धारणाओं की सम्भावना बनती है–

1. राज्य भर में, रिपोर्ट करने वाले सभी ज़िलों में से किसी में भी ग्राम सभा के स्तर पर कोई भी नया दावा दायर नहीं किया गया, अथवा
2. राज्य भर में, रिपोर्ट करने वाले सभी ज़िलों में से किसी में भी ग्राम सभा के स्तर पर कोई भी नया दावा स्वीकार नहीं किया गया।

हमारे पास उपलब्ध जानकारी के अनुसार दावा दायर करने की प्रक्रिया में अब भी बहुत अधिक असंगति है तथा प्रारम्भिक चरण से ही बाधाएँ खड़ी की जा रही हैं।

**2.4.ग जनजातीय कार्य मन्त्रालय की स्थिति में परिवर्तन नहीं:** जनजातीय कार्य मन्त्रालय (मिनिस्ट्री ऑफ ट्रायबल अफेयर्स – 'मोटा') के 20 महीनों की अवधि की दत्त–सामग्री (डाटा) का विश्लेषण इस ओर इंगित करता है कि मन्त्रालय राज्य में वन अधिकार अधिनियम के कार्यान्वयन की न तो निगरानी कर रहा है और न ही वास्तविक प्रगति को रिपोर्ट कर रहा है।

नीचे दी गई तालिका से स्वतः स्पष्ट है कि विशेषकर राजस्थान के सन्दर्भ में मन्त्रालय केवल उन्हीं आँकड़ों को दोहरा रहा है और किसी वास्तविक प्रगति का उल्लेख नहीं किया गया है।

राज्य स्तरीय निगरानी समिति (एस.एल.एम.सी.) की भूमिका भी शंका के घेरे में आती है कि क्या यह समिति अस्तित्व में भी है और क्या यह अधिनियम के प्रावधानों की पालना कर भी रही है या नहीं?

---

9 देखें अनुलग्नक–8 (राजस्थान में वन अधिकार अधिनियम की स्थिति–जुलाई 2014) एवं अनुलग्नक–9 (राजस्थान में वन अधिकार अधिनियम की स्थिति–जुलाई 2015).

| तालिका–2: वन अधिकार अधिनियम (एफ.आर.ए.) के कार्यान्वयन की स्थिति रिपोर्ट (राजस्थान राज्य के लिए निकाला गया डाटा) | | | | | | | | | |
|---|---|---|---|---|---|---|---|---|---|
| 'मोटा' की सन्दर्भित रिपोर्ट | प्राप्त दावों की संख्या | | | वितरित अधिकार पत्रों की संख्या | | | वितरित वन क्षेत्र (एकड़ में) | | |
| | व्यक्तिगत | सामुदायिक | कुल | व्यक्तिगत | सामुदायिक | कुल | व्यक्तिगत | सामुदायिक | कुल |
| मई 2014 | 69123 | 652 | 69775 | 34082 | 65 | 34147 | 51406.97 | 479.73 | 51886.7 |
| सितम्बर 2014 | 69123 | 652 | 69775 | 34082 | 65 | 34147 | 51406.97 | 479.73 | 51886.7 |
| सितम्बर 2015 | 69121 | 654 | 69775 | 34779 | 69 | 34848 | 52239.11 | 482.58 | 52721.69 |
| अक्टूबर 2015 | 69121 | 654 | 69775 | 34956 | 69 | 35025 | 52451.05 | 482.58 | 52933.63 |
| दिसम्बर 2015 | 69121 | 654 | 69775 | 34956 | 69 | 35025 | 52451.05 | 482.58 | 52933.63 |
| जनवरी 2016 | 69121 | 654 | 69775 | 34956 | 69 | 35025 | 52451.05 | 482.58 | 52933.63 |

स्रोतः वन अधिकार अधिनियम (एफ.आर.ए.) के क्रियान्वयन पर जनजातीय मामलों के मन्त्रालय (मिनिस्ट्री ऑफ ट्रायबल अफेयर्स – 'मोटा') की रिपोर्ट (www.tribal.nic.in)

**2.4.घ सी.एफ.आर. की जड़ स्थितिः** सामुदायिक वन अधिकार (सी.एफ.आर.) के दावों को दायर करने और उनकी स्वीकृति की स्थिति 2014 से स्थिर बनी हुई है। बाँसवाड़ा के अलावा अन्य ज़िलों में कोई प्रगति नहीं हुई है; बाँसवाड़ा में 4 दावे दायर एवं स्वीकार किए गए। शेष ज़िलों में जुलाई 2014 से सामुदायिक दावों के बारे में डाटा यथावत बना हुआ है।

यही नहीं, लम्बित दावों पर प्रगति की जानकारी उपलब्ध ही नहीं है, विशेषकर उदयपुर ज़िले में (यह पुष्टि हो चुकी है कि ये सामुदायिक वन अधिकार के दावे हैं जो पारम्परिक अधिकारों के लिए किए गए हैं)। इस विषय पर कार्यरत आमजन एवं नागरिक समाज के संगठन (सी.एस.ओ.) अपने संसाधनों से ही जानकारियाँ जुटाते हैं। जैसा कि बताया गया है कि ज़िला स्तरीय समिति (डी.एल.सी.) के स्तर पर दो वर्ष से अधिक समय से 54 दावे लम्बित हैं किन्तु इनमें कोई प्रगति नहीं हुई है सिवाए इसके कि इनमें से कुछ दावों को पुनर्विचार के लिए उप–ज़िला स्तरीय समिति (एस.डी.एल.सी.) को पुनः भेज दिया गया है।

**2.4.च डी.एल.सी. स्तर पर नवीनतम जानकारी का अभावः** उदयपुर ज़िले के ज़िला स्तीय नोडल अधिकारी (प्रोजैक्ट ऑफिसर, जनजाति क्षेत्रीय विकास विभाग) के पास ग्रामवार दावों की अद्यतन जानकारी नहीं है, जबकि अलवर में कोई ज़िम्मेदार व्यक्ति उपलब्ध ही नहीं है जिसके पास कोई जानकारी हो।

**2.4.छ कार्ययोजना की पूर्ति नहींः** वर्ष 2012 में जनजातीय आयुक्तालय ने एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन को अगस्त, 2013 तक पूर्ण कर लेने की समयबद्ध कार्ययोजना बनाई थी। राज्य सरकार के 'प्रशासन गाँव

के संग' अभियान के साथ कार्ययोजना का मेल बिठाया गया था। नवम्बर 2012 में प्रशिक्षण के मॉड्यूल एवं सामग्री तैयार करने तथा इसके बाद के सात चरणों की समयबद्ध कार्ययोजना निर्मित की गई थी। ग्राम सभा द्वारा सभी दावों के निस्तारण की अन्तिम घोषणा के साथ कार्ययोजना को पूर्ण होना था। इस समस्त प्रक्रिया को 15 अगस्त, 2013 तक समाप्त कर दिया जाना था, किन्तु योजना के अनुसार कुछ भी पूरा नहीं हुआ।

**2.4.ज डी.सी.एफ. के पास अधिकार पत्रों के पुराने अभिलेखों की जानकारी :** राजस्थान सरकार ने जून 2013 में प्रधान मुख्य वन संरक्षक (वन बल के प्रमुख) {पी.सी.सी.एफ. (एच.ओ.एफ.एफ.)} को व्यक्तिगत वन अधिकार (आई.एफ.आर.) एवं सामुदायिक वन अधिकार (सी.एफ.आर.) के अधिकार पत्रों के अभिलेख अलग–अलग संधारित करने का आदेश[10] जारी किया। इस आदेश की पालना में उदयपुर, डूँगरपुर, बाराँ, चित्तौड़गढ़, प्रतापगढ़, राजसमन्द एवं भीलवाड़ा के ज़िला वन संरक्षकों (डी.सी.एफ.) ने निर्धारित प्रपत्र में स्वीकृत अधिकार पत्रों की जानकारी उपलब्ध करवाई। अधिकार पत्रों की 2013 की स्थिति के अभिलेख विभागीय वैबसाईट पर 2015 में अपलोड किए गए। अद्यतन अभिलेख उपलब्ध नहीं हैं।

**2.4.झ एस.डी.एल.सी. एवं डी.एल.सी. का पुनर्गठनः** राज्य सरकार ने 27/12/2013 के आदेश[11] से सभी आयोग/निगम/ब्लॉक/राज्य व ज़िला स्तरीय समितियों के गै़र–सरकारी सदस्यों (अध्यक्ष/उपाध्यक्ष/सदस्य) की सदस्यता तुरन्त प्रभाव से भंग कर दी। आदेश की अनुपालना में एफ.आर.ए. के अन्तर्गत गठित एस.डी.एल.सी. व डी.एल.सी. भी भंग कर दी गईं। बाद में एस.डी.एल.सी. व डी.एल.सी. के पुनर्गठन का कार्य आरम्भ किया गया जो अब तक पूरा नहीं किया गया है। इसके अतिरिक्त, वन अधिकार समितियों (एफ.आर.सी.) को भंग करने और उनके पुनर्गठन के बारे में कोई जानकारी उपलब्ध नहीं कराई गई है और इसलिए यह स्पष्ट नहीं है कि पूर्व की एफ.आर.सी. कायम हैं या नहीं एवं एफ.आर.ए. की स्वीकृति की प्रक्रिया में उनका प्राधिकार है या नहीं।

**2.4.ट एफ.आर.सी. का गठनः** प्राप्त जानकारी के अनुसार अधिकतर वन अधिकार समितियों (एफ.आर.सी.) का गठन अवैधानिक तरीके से, ग्राम सभा की बैठक के बिना किया गया है; यहाँ तक कि सदस्यों को भी मालूम नहीं है कि उन्हें नामित किया गया है।

उदाहरण के लिए, उदयपुर ज़िले की झाड़ौल और कोटड़ा तहसीलों में वन अधिकार समितियों के सदस्यों के बारे में सरपंच एवं नामित सदस्यों तक को जानकारी नहीं है। ऐसे में, एफ.आर.ए. (आई.एफ.आर.) के दावों की फाइलें कैसे तैयार हो रही हैं और उच्च स्तर तक पहुँच रही हैं यह पड़ताल का विषय है।

## 2.5 नागरिक समाज के संगठनों के हमें ज्ञात दावों का विवरण

गै़र–सरकारी संगठनों (एन.जी.ओ.) से प्राप्त जानकारी के अनुसार राजस्थान के 150 से अधिक गाँवों में 30 हज़ार हैक्टर से अधिक वन भूमि के लिए सामुदायिक वन अधिकार (सी.एफ.आर.) के दावे तैयार किए गए हैं/किए जा रहे हैं। इनमें से किसी का भी उल्लेख जनजातीय आयुक्तालय के पास उपलब्ध अभिलेखों में नहीं है। हमने सम्बन्धित संगठनों के साथ इसे साझा किया है, नवीनतम स्थिति की जानकारी की प्रतीक्षा है।

---

10 अनुलग्नक–10: सचिव, राजस्थान सरकार द्वारा जारी पत्र क्रमांक एफ–8(10) फॉरेस्ट्स/2005 पार्ट, दिनांक 12–03–2013.
11 प्रशासनिक सुधार विभाग, राजस्थान सरकार, द्वारा जारी पत्र क्रमांक 6(43) एआर/सेक.–3/2013, दिनांक 27–12–2013.

सेवा मन्दिर ने झाड़ौल क्षेत्र से सी.एफ.आर. के 52 दावे पेश किए हैं, जिनका भू–क्षेत्र करीब 13728 हैक्टर है जिसका औसत करीब 264 हैक्टर प्रति गाँव होता है।

आस्था संस्था ने सी.एफ.आर. के 90 दावे प्रस्तुत किए हैं। उनके पास इनमें से 77 दावों के प्रमाण हैं, जो पाँच ज़िलों से 38468 हैक्टर से अधिक भूमि के लिए किए गए हैं। इन्हीं में से 29 दावे उदयपुर ज़िले में करीब 18262 हैक्टर भूमि (जिसमें करीब 226 हैक्टर चारागाह भूमि शामिल है) के लिए हैं; इनमें से 22 दावे एस.डी.एल.सी. के स्तर पर लम्बित बताए गए हैं।

अन्य संस्थाएँ, जैसे कि प्रयत्न समिति, जागरण जन विकास समिति, लोकहित पशुपालक संघ, क्रपाविस, फाउण्डेशन फॉर इकोलॉजिकल सिक्योरिटी (एफ.ई.एस.) आदि ने भी सी.एफ.आर. के दावे तैयार करवाए हैं; इनमें से कुछ प्रस्तुत किए गए हैं किन्तु जिनकी अभिस्वीकृति प्राप्त नहीं हुई है, जबकि अधिकतर तैयार किए जा रहे हैं। इनकी कुल संख्या करीब 1 लाख हो जाएगी, जो कि आवश्यकता से बहुत कम है।

इस तथ्य को दोहराते हुए कि एफ.आर.ए. अधिकारों को स्वीकार करने के बारे में है, इस प्रक्रिया को फिर से सक्रियता से साथ शुरू करने की ज़रूरत है– विशेषकर इस यथार्थ के मद्देनज़र कि समुदायों/व्यक्तियों ने दावे पेश करने के बजाय अधिकतर 'सीधी कार्रवाई' करते हुए अपने अधिकार का प्रयोग किया है।

## 2.6 विश्लेषण

### 2.6.क जहाँ सी.एस.ओ. कार्यरत हैं (इसका सामान्यीकरण नहीं करना चाहिए क्योंकि इस स्वरूप में भी विविधताएँ हैं)

– सी.एफ.आर. के लिए प्रथागत/परम्परागत सीमाओं के बजाय जे.एफ.एम. की सीमाओं को प्राथमिकता दी गई; दावा की गई भूमि को जे.एफ.एम. योजना की हदों में सीमित किया गया

– गाँववासियों से कहा गया कि वे सी.एफ.आर. के लिए दावा करने के बजाय जे.एफ.एम. के माध्यम से लाभ प्राप्त करते रहें

– ग्राम सभा (जो कि सम्पूर्ण ग्राम पंचायत की होती है) के बजाय अन्य बड़े संस्थागत निकायों (उदाहरण के लिए जे.एफ.एम.सी./वन सुरक्षा समिति) के नाम से सी.एफ.आर. के दावे पेश किए गए (उदाहरणार्थ झाड़ौल, उदयपुर)

– जे.एफ.एम. ने वनों के विनाश को कम किया और उनके संरक्षण को बढ़ावा दिया। किन्तु, इसमें वन–क्षेत्र में कृषि कार्य को शामिल नहीं किया गया था इसलिए आस्था व अन्य संस्थाओं ने इसका विरोध किया। इस प्रकार, यह स्वाभाविक था कि प्रारम्भिक चरणों में एफ.आर.ए. में व्यक्तिगत वन अधिकार के दावे ही अधिक पेश हुए।

### 2.6.ख एफ.आर.ए. की प्रक्रिया (मुख्य मुद्दे/निष्कर्ष)

– जनजातीय आयुक्तालय में सम्बन्धित उच्चाधिकारी इस मामले पर यथोचित उत्तरदायित्व के साथ काम नहीं कर रहे हैं। केवल एल.डी.सी./यू.डी.सी. स्तर के अधिकारी समस्त डाटा एवं दस्तावेज़ीकरण का संधारण कर रहे हैं।

– सी.एफ.आर. के दावों की स्वीकृति में शून्य उपलब्धि से अवगत जनजातीय विभाग के पास इस कार्य को पूर्ण करने की कोई योजना नहीं है।

– एस.डी.एल.सी./डी.एल.सी. के स्तर पर नोडल अधिकारियों के बारम्बार परिवर्तन से डाटा एवं दावों का समय पर निस्तारण बाधित हुआ है।

– प्रारम्भ में अधिकतर औपचारिक उन्मुखीकरण कार्यक्रम जनजाति शोध संस्थान, उदयपुर की मदद से आयोजित किए गए थे और उसके बाद एफ.आर.सी. व पंचायती राज संस्थाओं की पहुँच एवं उन्मुखीकरण की कोई निगरानी नहीं की गई।

– राज्य सरकार ने जानबूझकर इस प्रक्रिया को प्रलम्बित किया ताकि लोगों को दावे, विशेषकर सी.एफ. आर., पेश करने में परेशान किया जाए {वन विभाग ने प्रक्रिया में अड़चनें डालकर दबाव बनाया (उदाहरण के लिए, कुलक, डी.सी.एफ. द्वारा डाटा का संधारण, दावा की गई भूमि के सत्यापन में विलम्ब करना)}।

  * डी.सी.एफ. को स्वीकृत आई.एफ.आर., सी.एफ.आर. एवं सी.एफ.आर.–सैक्शन 3(2) के अभिलेखों का निर्धारित प्रपत्र में संधारण करना (देखें अनुलग्नक–10) और वन विभाग की वैबसाइट पर अद्यतन डाटा अपलोड करना होता है (अधूरा डाटा अपलोड किया गया है, जनजातीय आयुक्तालय के ज़िलेवार डाटा से मिलान करने की आवश्कता है)।

– सरकार, अन्ततः, ग्राम सभा द्वारा सभी दावों के निस्तारण की घोषणा की प्रतीक्षा कर रही है।

– अधिकतर वन अधिकार समितियाँ (एफ.आर.सी.) निष्क्रिय हैं। लोग स्वयं ही अथवा बिचौलियों के माध्यम से दावे तैयार करते हैं और भूमि के सत्यापन के लिए वन विभाग व राजस्व विभाग के अधिकारियों के हस्ताक्षर प्राप्त करते हैं (दरअसल रिश्वत देकर) तथा, ग्राम सभा की बैठक में औपचारिक स्वीकृति प्राप्त किए बिना, फाइल को पंचायत सचिव के माध्यम से (रिश्वत देकर) सीधे एस.डी.एल.सी. स्तर पर जमा करते हैं। पंचायत सचिव द्वारा ग्राम सभा की बैठक की तिथि एवं प्रस्ताव संख्या उपलब्ध करवा दी जाती है। एफ.आर.सी. के अध्यक्ष व सचिव तक व्यक्तिगत रूप से पहुँचकर दावों के दस्तावेज़ों पर उनके हस्ताक्षर व सील प्राप्त कर लिए जाते हैं (उदाहरण के लिए झाड़ौल ब्लॉक में गामरी, हीरूमाला, जेटीवाड़ा)।

– ग्राम सभा द्वारा एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन की प्रक्रिया को सहज करने की कोई पहल नहीं की जा रही है।

– आई.एफ.आर. पर ध्यान केन्द्रित है।

– उदयपुर एवं अलवर, दोनों जगह सार्वजनिक सम्पत्ति के संसाधनों पर समुदायों के झगड़े नियमित घटनाएँ हो गई हैं, जो कि सी.एफ.आर. में समुदाय की अरुचि के प्रमुख कारणों में से एक है। लोग पहले अपने आई.एफ.आर. दावे की प्राप्ति में अधिक रुचिशील हैं (इस अवलोकन का आधार दोनों ही क्षेत्रों में समुदाय के साथ व्यक्तिगत सम्पर्क और स्थानीय सी.एस.ओ. एवं वहीं के अन्य लोगों के सहयोग से हुई चर्चा है)। दावा किए जाने वाले सी.एफ.आर. क्षेत्र के सीमांकन से पूर्व पारम्परिक सीमाओं पर झगड़े एक अन्य प्रमुख बाधा है (युवा पीढ़ी को इन पारम्परिक सीमाओं की ठीक जानकारी नहीं है, इसलिए वरिष्ठ लोगों को मध्यस्थता करने व विवादों को सुलझाने की आवश्यकता है)।

– सी.एफ.आर. की प्रक्रिया कुछ सीमित क्षेत्रों में ही है और एन.जी.ओ. व सामुदायिक लामबन्दी की ऐतिहासिक राजनीतिक प्रक्रियाओं से सम्बद्ध प्रतीत होती है (उदाहरण के लिए उदयपुर ज़िले के वे गाँव जिनकी केस स्टडी की गई)।

– एफ.आर.ए. के समुचित कार्यान्वयन में विलम्ब के प्रमुख कारणों में से एक प्रक्रिया को शीघ्र पूरा करने में ग्राम सभा की अरुचि भी है (यह मुद्दा उदयपुर में आयोजित बैठक में 'जल, जंगल, ज़मीन, जन आन्दोलन' के सदस्यों ने भी उठाया था)। अलवर में ग्राम सभा की अरुचि एक अन्य कारण से भी है– वह है पुनर्वास का दबाव, जिसका समाधान प्राथमिकता के आधार पर किए जाने की आवश्यकता है।

– निजी नियन्त्रण / चारागाह भूमि पर अतिक्रमण तथा / अथवा दूर–दराज़ का वन क्षेत्र (उदाहरण के लिए उदयपुर के झाड़ौल में गाँव गलदर, गेजवी, जेटीवाड़ा आदि तथा अलवर में बेरा, लोज, नाथूसर, भगतपुरा, बीनाक आदि)। वन रेंज अधिकारी द्वारा लोगों को अवैधानिक कब्ज़े के मामलों में सुनवाई के लिए तलब करना और जुर्माना आयद करना (रिश्वतख़ोरी का बोलबाला) – कब्ज़ा किए गए भू–क्षेत्र का आई.एफ.आर. दावा पेश करने पर परेशान करना।

– राजस्व वन क्षेत्र में आई.एफ.आर. के दावों के तहत माँग करने पर भू–क्षेत्र का आवंटन कर दिया जाता है किन्तु अधिसूचित वन क्षेत्र / संरक्षित वन क्षेत्र में जिनके कब्ज़े हैं उनके दावों को नकार / अस्वीकार कर दिया जाता है। इस सबको इस आलोक में भी समझना होगा कि आई.एफ. आर. के ऐसे दावे जो पारम्परिक भू–सम्पत्ति नहीं माने जाते हैं उनपर स्थानीय स्तर पर विवाद हैं, और इसलिए समिति के सदस्य / ग्राम सभा इस परिपाटी को मानने के प्रति अनिच्छुक होते हैं।

## 3. सी.एफ.आर. की प्रक्रिया को आगे बढ़ाना

जनजातीय विकास मन्त्रालय ('मोटा') द्वारा 10 / 06 / 2015[12] को सभी राज्यों के मुख्य सचिवों को जारी परिपत्र में एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन को अभियान की तरह लेने के प्रधानमन्त्री के आह्वान पर बल दिया गया है। विभिन्न राज्यों के अनुभव युद्ध स्तर पर सी.आर. एवं सी.एफ.आर. के कार्यान्वयन पर ज़ोर देने की आवश्यकता इस ओर इंगित करते हैं। 'मोटा' के 10 / 04 / 2015[13] के परिपत्र में भी इस बिन्दु को रेखांकित किया गया है।

यहाँ दी गई रिपोर्ट स्थानीय समुदायों के ज्ञान का नागरिक समाज के संगठनों के साथ संयोजन करने की प्रक्रिया का सूत्रपात करने की रूपरेखा प्रस्तुत करती है, जिससे कि राजस्थान में वानिकी से जुड़े आजीविका एवं अभिशासन के मुद्दों को आगे बढ़ाने के लिए एक संघटकीय संगठन के विकास को प्रवर्तक बल प्राप्त होगा। वन में निवास करने वाले समुदायों के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय की प्रक्रिया को पलटने में सी.एफ. आर. द्वारा अग्रणी भूमिका निभाने तथा इस परिवर्तन के लिए नेतृत्व प्रदान करने हेतु इन समुदायों को सशक्त करने के बीच गूढ़ सम्बन्ध है।

---

12 अनुलग्नक–11.
13 अनुलग्नक–12.

### 3.1 क्षेत्रों का चयन

- ऐसे दो ज़िलों का चयन जहाँ आजीविका की जनजातीय एवं चरवाही व्यवस्थाओं की झलक मिलती है।
- दोनों ज़िलों में एफ.आर.ए. के प्रावधानों का ज़िला स्तर तक विश्लेषण किया गया, जबकि दोनों ही क्षेत्रों में ज़मीनी हकीकत और सूक्ष्म–स्तरीय विश्लेषण हेतु केस स्टडी के लिए कुछ गाँवों का चयन किया गया।
- गाँवों के चयन के मानकों का आधार मुख्यतः उनकी भौगोलिक स्थिति थी जो सी.एफ.आर. के सम्भावित क्षेत्र को जनसांख्यिकी, बसावट एवं आजीविका के स्वरूपों के तुलनात्मक वर्गीकरणों में दर्शाती थी। साथ ही, इसमें ऐसे स्थानीय नागरिक समाज के संगठनों एवं जन हितार्थ समूहों की सिफारिश भी शामिल थी जो वन संसाधनों के सामुदायिक अभिशासन के प्रति समुदाय के दृष्टिकोण एवं इच्छा से परिचित थे।
- अलवर का चयन इस दृष्टिकोण पर भी आधारित था कि एफ.आर.ए. के प्रावधानों के अन्तर्गत सम्भावित उपयुक्त क्षेत्र होने के बावजूद इस ज़िले में एफ.आर.ए. का कोई दावा दायर नहीं किया गया था अथवा लम्बित (!) था, जबकि प्राप्त जानकारी के अनुसार सरिस्का टाइगर रिज़र्व (एस.टी.आर.) के लिए गाँवों के पुनर्वास हेतु एफ.आर.ए. के प्रावधानों को लागू किया जा रहा था और जिसमें एस.डी.एल.सी. व डी.एल.सी. के गठन के अनिवार्य प्रावधानों को नज़रअन्दाज़ कर दिया गया था।

### 3.2 केस स्टडी के लिए चयनित गाँव

दोनों क्षेत्रों में केस स्टडी के लिए चयनित गाँव निम्नलिखित हैं–

क्षेत्र–1ः उदयपुर (06 गाँव) – गलदर (मोरमगरा सहित), गेजवी, जेटीवाड़ा, हीरूमाला एवं गामरी।

क्षेत्र–2ः अलवर (05 गाँव) – बख़्तपुरा, बेरा (रून्ध कलीखोल), कलीखोल, बीनाक एवं लोज–नाथूसर।

दोनों ही क्षेत्रों में सम्बन्धित नागरिक समुदाय के संगठनों (सी.एस.ओ.) एवं समुदाय को राइट्स एण्ड रिसोर्सेज़ इनिशिएटिव (आर.आर.आई.) द्वारा सी.एफ.आर. के लिए राजनीतिक अध्ययन के बारे में अवगत कराया गया। शुरुआत के लिए 'शक्ति' के पी. शिवरामाकृष्णन ने नल्लामल्ला के चेन्चस द्वारा अपनाई गई मानचित्रण की प्रक्रिया को समझाया।

### 3.3 क्षेत्र–1ः दक्षिणी अरावली पर्वतमाला – उदयपुर (झाड़ौल)

सोसायटी फॉर प्रोमोशन ऑफ वेस्टलैण्ड्स डवलपमैण्ट (एस.पी.डब्ल्यू.डी.) ने साउथ एशिया प्रो पूअर लाइवस्टॉक पॉलिसी प्रोग्राम[14] के लिए दक्षिणी राजस्थान पर रिपोर्ट तैयार की थी, जिसमें अस्सी के दशक के मध्य से 2008 तक के बीस वर्षों के दौरान संरक्षण एवं विकास के प्रभाव की समीक्षा की गई है। यह अध्ययन बताता

14 "एफर्ट्स टूवर्ड्स द रेस्टोरेशन ऑफ डीग्रेडेड कॉमन्स एण्ड द स्ट्रगल फॉर फॉरेस्ट राइट्स इन सदर्न राजस्थान विथ स्पेशल फोकस ऑन एनिमल हस्बैण्ड्री प्रैक्टिसेज़ एण्ड ग्रेज़िन्ग राइट्स" फॉर द साउथ एशिया प्रो पूअर लाइवस्टॉक पॉलिसी प्रोग्राम (एस.ए.पी.पी.एल.पी.पी.) – ए जॉइण्ट इनिशिएटिव ऑफ एन.डी.डी.बी. एण्ड एफ.ए.ओ. – बाय सोसायटी फॉर प्रोमोशन ऑफ वेस्टलैण्ड्स डवलपमैण्ट (एस.पी.डब्ल्यू.डी.), न्यू डैल्ही – वीरेन लोबो एण्ड डॉ. जगदीश पुरोहित, 2008.

है कि क्षेत्र में संयुक्त वन प्रबन्धन (जॉइण्ट फॉरेस्ट मैनेजमैण्ट – जे.एफ.एम.) एवं अन्य विकास कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के परिणामस्वरूप सदी के अन्त तक वन क्षेत्र 25 प्रतिशत बढ़ गया था। फिर भी, वन विभाग ने वन उत्पादों पर अपना मालिकाना हक जताने पर ज़ोर देते हुए लोगों के द्वारा उन उत्पादों के स्वतन्त्र उपयोग को नियन्त्रित करने का प्रयास किया जिनका उन्हीं लोगों ने संरक्षण एवं संवर्द्धन किया था, और इससे संरक्षण की प्रक्रिया को गहरा धक्का लगा। वन अधिकार अधिनियम, 2006 के पारित होने के ठीक पहले एवं उसके बाद के दौर में इस क्षेत्र में बड़े पैमाने पर वनों का विनाश हुआ। उदाहरण के लिए झाड़ौल में वन–विनाश, जिसका दस्तावेज़ीकरण ई. सोमनाथन ने किया।[15] किन्तु, वन अधिकार अधिनियम के कार्यान्वयन ने लोगों की उम्मीदों को झूठा साबित किया। कई दावे अस्वीकार कर दिए गए और जहाँ दावे स्वीकार भी हुए वहाँ आवेदन की गई भूमि का एक छोटा हिस्सा ही मन्ज़ूर किया गया। कुल मिलाकर, नई जोती गई ज़मीन की बात तो दूर रही, जो भूमि अधिनियम के पहले 'कब्ज़ा' के तौर पर दर्ज थी उसका भी एक छोटा हिस्सा ही स्वीकार किया गया। कार्यान्वयन की इस मन्थर गति और भावी पीढ़ियों के भविष्य की चिन्ता के मद्देनज़र अधिकतर लोग यथास्थिति बनाए रखने पर ही भरोसा कर रहे हैं (यानी कि कब्ज़ा करके व्यक्तिगत भू–अधिकार प्राप्त करना)। इस प्रक्रिया ने वन विभाग में बहुत प्रतिरोध उत्पन्न किया है। ऐसे में यह बोध बढ़ता जा रहा है कि सामुदायिक वन अधिकार की माँग ही आगे का यथार्थवादी रास्ता है।

### 3.3.क क्षेत्र का वर्णन

उदयपुर ज़िला दक्षिणी राजस्थान में अरावली पर्वतमाला के दक्षिणी छोर पर स्थित है। इस ज़िले के पूर्व में चित्तौड़गढ़, पश्चिम में सिरोही, उत्तर में राजसमन्द एवं पाली तथा दक्षिण में डूँगरपुर व बाँसवाड़ा के साथ ही गुजरात का बनासकाण्ठा ज़िले हैं। अरावली दुनिया की सबसे पुरानी पर्वतमालाओं में से एक है और एक महत्त्वपूर्ण भौगोलिक उच्चावच स्वरूप है, जिसे पूर्वी राजस्थान के मैदानों व पठारों को थार मरुस्थल से अलग करने वाली सरहद के रूप में भी देखा जाता है। कृषि–पारिस्थितिकीय अनुक्षेत्र वर्गीकरण के अनुसार यह ज़िला उत्तरी मैदान (एवं मध्य पहाड़ी भू–क्षेत्र), जिसमें अरावली पर्वतमाला शामिल है, में आता है और यह गर्म अर्ध–शुष्क क्षेत्र है। यह ज़िला मुख्यतः तीन कारणों से प्रसिद्ध है– झीलें व नदियाँ, खनिज सम्पदा और पर्यटन स्थल, किन्तु सामाजिक–सांस्कृतिक दृष्टिकोण से यह विविध जनजातीय संस्कृतियों के कारण प्रसिद्ध है, जो विशेषकर बस्तियों और आजीविका के स्वरूपों में दृष्टिगोचर होती हैं।

उदयपुर ज़िले की कुल जनसंख्या 30 लाख से अधिक है, जिसमें 80.2 प्रतिशत ग्रामीण एवं 19.8 प्रतिशत शहरी आबादी है। यहाँ अनुसूचित जाति 6.14 प्रतिशत व अनुसूचित जनजाति 49.71 प्रतिशत हैं। प्रमुख जनजातियाँ भील व मीणा हैं जबकि अन्य में गरासिया, डामोर, नायक, ढोर, कथोड़ी, साँसी व कंजर आदि हैं।

राजस्थान में अनुसूचित जनजातियों का वितरण मुख्यतः पूर्वी एवं दक्षिणी हिस्सों में है। लगभग सभी जनजातीय समूह दक्षिणी राजस्थान में निवास करते हैं। इसलिए दक्षिणी राजस्थान के पाँच ज़िले बाँसवाड़ा, डूँगरपुर (पूर्णतः जनजाति क्षेत्र) व उदयपुर, चित्तौड़गढ़ (प्रतापगढ़) और सिरोही (अंशतः जनजाति क्षेत्र) संविधान की पाँचवी अनुसूची[16] में अनुसूचित क्षेत्रों के अन्तर्गत दर्ज हैं, और इसलिए 'पेसा' एक्ट, 1996 के प्रावधान इनमें भी लागू होते हैं। उदयपुर ज़िले में अनुसूचित जनजातियों की औसत जनसंख्या 74.1 प्रतिशत है। यही कारण

---

15 फॉरेस्ट राइट्स एक्ट – सम प्रिलिमिनरी फाइण्डिंग्स वर्कशॉप ऑन द कॉमन्स, सेवा मन्दिर, उदयपुर 13 सितम्बर 2013, ई. सोमनाथन, इण्डियन स्टैटिस्टिकल इंस्टिट्यूट, डैल्ही बेस्ड ऑन जॉइण्ट रिसर्च विथ ज्याँ–मैरी बलाँ एण्ड फ्राँसुआ लिबॉइ, यूनिवर्सिटी ऑफ नमूर, जगदीश कृष्णास्वामी, ए.टी.आर.ई.ई.

16 पाँचवीं अनुसूची {धारा 244(1)} अनुसूचित क्षेत्रों एवं अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन एवं नियन्त्रण हेतु प्रावधान, भारत का संविधान.

है कि उदयपुर ज़िला जनजातीय उपयोजना क्षेत्र का हिस्सा है तथा राजस्थान के उन 13 ज़िलों में शामिल है जिन्हें पिछड़ा क्षेत्र अनुदान निधि कार्यक्रम (बी.आर.जी.एफ.)[17] से धनराशि प्राप्त हो रही है।

उदयपुर ज़िला 11 उपखण्डों/तहसीलों में विभक्त है– कोटड़ा, खेरवाड़ा, ऋषभदेव, झाड़ौल, सलूम्बर, सराड़ा, लसाड़िया, गिर्वा, गोगुन्दा, मावली एवं वल्लभनगर। ज़िले में जनजातियों की सघन आबादी वाली तहसीलों में कोटड़ा, लसाड़िया, ऋषभदेव, झाड़ौल (फलासिया) और खेरवाड़ा शामिल हैं।

झाड़ौल, उदयपुर ज़िले की जनजातीय बहुल तहसीलों में से एक है जहाँ की 75.78 प्रतिशत आबादी अनुसूचित जनजाति की है जो 283 गाँवों में रहती है। इस क्षेत्र की प्रमुख जनजातियाँ भील, मीणा, गरासिया व डामोर हैं। झाड़ौल तहसील में सघन वन क्षेत्र है जिसमें क्षेत्रीय वन एवं वन्य जीव अभयारण्य (फुलवारी की नाल) शामिल हैं। यह क्षेत्र पश्चिमी बनास–साबरमती नदी बेसिन[18] का हिस्सा है और वाकल नदी का जलग्रहण क्षेत्र है।

उदयपुर ज़िले में कुल वन क्षेत्र 390632.85 हैक्टर है, जिसमें क्षेत्रीय वन, वन्य जीव अभयारण्य एवं संरक्षित क्षेत्र शामिल हैं। क्षेत्रीय वन 320505.47 हैक्टर है, जबकि 70127.38 हैक्टर में वन्य जीव अभयारण्य हैं। अभयारण्यों में फुलवारी की नाल (51141 हैक्टर), जयसमन्द (5234.2 हैक्टर) व सज्जनगढ़ (519.61 हैक्टर) पूर्ण रूप से ज़िले का हिस्सा हैं, जबकि कुम्भलगढ़ (12077.86 हैक्टर) एवं सीतामाता (777 हैक्टर) आंशिक रूप से ज़िले में सम्मिलित हैं। ज़िले के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 29.11 प्रतिशत अधिसूचित वन क्षेत्र है। ज़िले का वन क्षेत्र अरावली के पूर्वी हिस्से में मौजूद वन क्षेत्र का 16.7 प्रतिशत है; अरावली के सघन वन क्षेत्र का 32 प्रतिशत हिस्सा उदयपुर ज़िले में आता है।

उदयपुर ज़िले में 2479 गाँव हैं, जिनमें से 2471 गाँव आबाद हैं और 8 गाँव निर्जन हैं। ज़िले के समस्त गाँवों में से 1088 (लगभग 44 प्रतिशत) में राजस्व क्षेत्र के अन्तर्गत भू–उपयोग के लिए वन हैं। इन 1088 गाँवों में भू–उपयोग के रूप में लगभग 275626 हैक्टर वन क्षेत्र है, जो कि इन गाँवों के कुल क्षेत्र का 42 प्रतिशत से अधिक है और पूरे ज़िले का 21 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र है।

### 3.3.ख बसावट एवं अधिकार

भील जनजाति के लोग अधिकांशतः अरावली के पहाड़ियों से घिरे सघन जंगलों वाले इलाकों में रहते आए हैं। उनकी बसावट का स्वरूप अधिकतर पहाड़ियों में एक–दूसरे से अलग–अलग झोंपड़ियों का समूह होता है; हर झोंपड़ी कृषि भूमि के बीच एक छोटी टेकरी (भूमि का कुछ उठा हुआ भाग; टीला) पर होती है। ऐसे समूहों से मिलकर एक 'फला' बनता है और 'फलों' से मिलकर एक बस्ती बनती है। मीणा जनजाति के लोग अपनी बस्तियाँ चट्टानी उठानों पर या घने जंगलों में बनाते रहे हैं। गरासिया जनजाति के लोग अपने खेतों के सामने की ढलानों पर बस्तियाँ बसाते आए हैं जिनका विस्तार निचली ढलानों से उनके सामने के मैदानों तक होता है। वे घर की निर्माण सामग्री के तौर पर बाँस और पत्तों का इस्तेमाल करते रहे हैं और दीवार को गोबर व मिट्टी मिलाकर बनाए लेप से लीपते हैं।

ब्रिटिश काल के पहले से समुदायों की बसावट के बारे में दो तरह के वर्णन मिलते हैं, और दोनों ही जनजातीय समुदाय को बिलकुल भिन्न तरह दर्शाते हैं; सम्भवतः वास्तविकता इन दोनों के बीच में कहीं है[19]। एक वर्णन

---

17 पिछड़ा क्षेत्र अनुदान निधि कार्यक्रम (बी.आर.जी.एफ.), पंचायती राज मन्त्रालय, भारत सरकार. इस कार्यक्रम की आयोजना, कार्यान्वयन एवं प्रबन्धन संविधान के भाग IX एवं IX-A के अनुसार गठित पंचायतों, नगर निकाय एवं ज़िला आयोजना समितियों द्वारा किया जाना चाहिए.

18 इण्डिया डब्ल्यू.आर.आई.एस. 2012, रिवर बेसिन एटलस ऑफ इण्डिया, आर.आर.एस.सी.–वैस्ट, एन.आर.एस.सी., इसरो, जोधपुर, इण्डिया.

19 बल्लभ, पंकज (एड.), लैण्ड, कम्युनिटी एण्ड गवर्नेन्स, नेशनल फाउण्डेशन फॉर इण्डिया और सेवा मन्दिर का संयुक्त प्रकाशन, 2004.

टॉड[20] व अन्य का है जिसके अनुसार मराठों के आक्रमण के समय राजपूत उन क्षेत्रों में पहुँचे जहाँ भील लोग निवास करते थे और कालान्तर में उन्होंने भीलों को विस्थापित कर ऊँचे पहाड़ी इलाकों में जाने पर मजबूर कर दिया। वहीं, अन्य स्थानीय वर्णनों के अनुसार सामन्ती शासक (राजपूत) अपनी भूमि पर काम करवाने, उसकी रखवाली करने और खेती करवाने के लिए जनजातीय लोगों (विशेषकर भील) को आसपास के इलाकों से लेकर आए। सन् 1900 तक, घाटियों एवं खेती के लायक भू–क्षेत्रों पर राजपूत रहने लगे थे और जनजातीय लोग आसपास के घने वन क्षेत्रों में रह रहे थे। वन में निवास करने वालों और गाँववासियों/स्थानीय व्यापारियों के बीच वाणिज्यिक सम्बन्ध था। जनजातीय लोग वन उत्पादों, जैसे कि जलाऊ लकड़ी, कन्द, औषधियाँ, चारे के लिए पत्तियाँ, बीज, फूल, फल, शहद आदि, का सौदा धन एवं उनकी ज़रूरत की अन्य सामग्रियों के बदले करते थे।

आज़ादी से पहले सामन्ती व्यवस्था प्रभावी थी और मेवाड़ के राणा के पास भूमि का पूर्ण अधिकार था, यह व्यवस्था 'रैयतवाड़ी' के नाम से जानी जाती थी। चारागाह भूमि और बंजर भूमि ही गाँव की सार्वजनिक भूमि मानी जाती थी। वन में निवास करने वाले जिस भूमि पर रहते थे वह श्रेणीबद्ध नहीं थी, और इसलिए उन्हें किसी भी प्रकार के भू–स्वामित्व से वंचित रखा गया था। शासक (मेवाड़ के राणा) के पास वनों की मिल्कीयत थी और इनका उपयोग मुख्यतः शिकार के लिए किया जाता था तथा वन उत्पादों को इकट्ठा करना, चराई या कटाई पर पूरी तरह से प्रतिबन्ध था। शासकों ने कुछ क्षेत्रों में ठेके पर कत्था (*एकेशिया केच्यु* पेड़ से) निकालकर बनाने की स्वीकृति दी थी। ठेकेदार, महाराष्ट्र के ख़ानदेश क्षेत्र (वर्तमान जलगाँव, धुले व नन्दुरबार ज़िले) से कथोड़ी जनजाति के लोगों को लाए जिन्हें कत्था निकालने में विशेषज्ञता हासिल थी। इन कथोड़ियों के पास बसने के लिए कोई भूमि नहीं थी, अतः वे भी भील जनजाति का अनुसरण करते हुए सघन वन क्षेत्रों के भीतर जा बसे।

वन क्षेत्र की सीमाओं की हदबन्दी का पहला अभिलेख 1920 का है किन्तु 1942 कुछ ख़ास नहीं हुआ। उस वर्ष भील जनजाति के आन्दोलन के बाद राज्य के शासकों ने मेवाड़ फॉरेस्ट एक्ट, 1942 के तहत उन्हें कुछ रियायतें दीं। इसी दौरान वनों का श्रेणीकरण एवं वर्गीकरण रक्षित एवं आरक्षित वर्गों में किया गया, वन क्षेत्र का बन्दोबस्त और उसका मानचित्रण भी शुरू किया गया।

आज़ादी के बाद, 1949 में लोगों, विशेषकर भील जनजाति, को दी गई रियायतों के बारे में एक सार्वजनिक सूचना जारी की गई। इसमें 1951 में और पुनः 1955 में संशोधन किए गए तथा, अन्ततः, इसका राजस्थान फॉरेस्ट कन्सेशन रूल्स, 1955 में विलय कर दिया गया। बाद में, राजस्थान लैण्ड रैवेन्यू एक्ट, 1956 और राजस्थान फॉरेस्ट (सैटलमैण्ट) एक्ट, 1958 प्रभावी हुए तथा व्यवस्थित सर्वे व बन्दोबस्त की प्रक्रिया आरम्भ हुई जो अब तक जारी है।

बन्दोबस्त की प्रक्रिया ने ऐसा बहुत सा भू–क्षेत्र उन लोगों से हथिया लिया जो उस भूमि पर रह तो रहे थे किन्तु उनके पास आधिकारिक पट्टे नहीं थे। पहली बार गाँवों की सीमाओं की हदबन्दी की प्रक्रिया शुरू हुई और कई गाँवों के परिक्षेत्र में विस्तृत चारागाह एवं वन क्षेत्र सम्मिलित किया गए, वहीं अन्य गाँवों में कोई सार्वजनिक भूमि नहीं रही। वन क्षेत्रों की हदबन्दी ने ग़लत तरीके से कई बसावटों को आरक्षित वन के भीतर चिह्नित कर दिया और इस तरह अनजाने ही उन्हें भू–स्वामित्व पाने के अधिकार से वंचित कर दिया। जिन गाँवों की भूमि वन खण्डों में समाविष्ट कर दी गई थी उन्हें वन विभाग ने जो अधिकार व रियायतें दी थीं वे

20 लेफ्टिनेण्ट कर्नल जेम्स टॉड, एनल्स एण्ड एण्टिक्विटीज़ ऑफ राजस्थान ऑर द सैण्ट्रल एण्ड वैस्टर्न राजपूत स्टेट्स ऑफ इण्डिया, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, 1920.

ना तो हर वन खण्ड में समान थीं और ना ही सम्बन्धित गाँवों के निर्धारित वन क्षेत्र के अनुपात में थीं। साथ ही, अधिकार एवं रियायतें गाँव की सीमा के निकट ही छोटे से हिस्से (वन खण्ड की छोटी इकाई) में दी गई थीं, जिससे गाँवों के बीच के शेष सार्वजनिक क्षेत्रों के उपयोग को लेकर विवाद और अधिक बढ़ गए। ऐसे पारम्परिक सीमा विवाद इन क्षेत्रों में अब तक जारी हैं। अनियमित बसावट (आधिकारिक शब्दों में अतिक्रमण) और वन की सीमा की ग़लत हदबन्दी का उल्लेख वन विभाग की कार्य योजनाओं के साथ ही साथ वन्य जीव प्रबन्धन योजनाओं में भी किया गया है।

वर्तमान में जो अधिकार एवं रियायतें प्रदान की गई हैं वे विभिन्न वन खण्डों में भिन्न हैं और इनका वर्णन सम्बन्धित अधिसूचनाओं में है। आम तौर पर, लोगों को जो अधिकार एवं रियायतें प्रदान की गई हैं वे निम्नलिखित हैंः

**अधिकार**

i. आन्तरिक रेखा के भीतर राजस्व भूमि पर खेती
ii. आन्तरिक रेखा से परिवृत्त भीतरी भूमि पर बसना
iii. पारम्परिक तरीकों से फसलों की सिंचाई
iv. महुआ (मधुका पेड़ का फूल), टीमरू (तेन्दू पेड़ का फल), आम, इमली आदि के फलों का एकत्रीकरण
v. रास्तों व पगडण्डियों का उपयोग
vi. वन क्षेत्र के भीतर स्थित मन्दिरों में पूजा एवं धार्मिक अनुष्ठान, जैसे कि भोज, करना
vii. पारम्परिक रूप से उपयोग किए जा रहे स्थान पर शवदाह

**रियायतें**

i. मवेशी चराना
ii. मृत्त मवेशी की खाल का स्वामित्व
iii. घरेलू ईंधन हेतु उपयोग के लिए सिर पर उठाई जा सके उतनी लकड़ी के भारे का एकत्रीकरण
iv. बाड़ बनाने के लिए सामग्री
v. खेती के उपकरणों के लिए लकड़ी का एकत्रीकरण
vi. सर्दियों में सिर पर उठाई जा सके उतनी घास के भारे का एकत्रीकरण
vii. अन्त्येष्टी के लिए लकड़ी
viii. मवेशियों के लिए वर्ष भर पीने का पानी इत्यादि

यह इलाका अनुसूचित क्षेत्र के अन्तर्गत आता है, अतः 'पेसा' एक्ट के प्रावधान {विशेषकर ग़ैर इमारती लकड़ी वन उत्पादों (एन.टी.एफ.पी.) एवं लघु वन उत्पादों (एम.एफ.पी.) से सम्बन्धित} भी लागू होते हैं।

आज़ादी के बाद के दौर में सरकार ने राजस्व बढ़ाने के लिए वन संसाधनों को बड़े पैमाने पर उत्पाद का दर्जा दे दिया जबकि वन पर निर्भर समुदायों को संसाधनों के ख़त्म होते जाने को मजबूरन बर्दाश्त करना

पड़ा। मेहता (1995)[21] के अनुसार, राज्य के अधिकार में जो भू–संसाधन हैं उनसे नए भूमि अधिकार देकर ग्रामीण जनों की क्षतिपूर्ति करने के बजाय राज्य ने सामन्ती व साम्राज्यवादी दौर के वन प्रबन्धन के लक्षणों वाली अपनी अभिरक्षक नीतियों को जारी रखा।

उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार उदयपुर ज़िले में प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र 0.17 हैक्टर है।[22] सितम्बर 2014 तक ज़िले के कुल वन क्षेत्र में से 69918.407 हैक्टर (लगभग 17.9 प्रतिशत) वन क्षेत्र ऐसा था जिसका सर्वे नहीं हुआ था।[23]

### 3.3.ग एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन के प्रावधान

उदयपुर ज़िले में जनवरी 2016 तक कुल 13701 दावे पेश किए गए थे, जिनमें से 52.7 प्रतिशत (7221) को अन्ततः स्वीकृति मिल गई थी और 35.5 प्रतिशत (4866) दावे अस्वीकार कर दिए गए थे जबकि 1614 दावे डी.एल.सी. स्तर पर लम्बित बताए गए थे। कुल स्वीकृत क्षेत्र 5837.203 हैक्टर था जिसका अर्थ है कि प्रति दावे का औसत स्वीकृत क्षेत्र मात्र 0.8 हैक्टर था।

इसके विपरीत, जनजातीय क्षेत्रीय विकास विभाग (टी.ए.डी.), जो डी.एल.सी. की बैठकें करवाता है, के द्वारा इसी अवधि के लिए प्रस्तुत डाटा के अनुसार ग्राम सभा, एस.डी.एल.सी. व डी.एल.सी. के स्तरों पर अस्वीकृत कुल दावे 6488 हैं, जो कि पेश किए गए कुल दावों का 47.35 प्रतिशत है। डी.एल.सी. के स्तर पर कोई दावा लम्बित नहीं होना बताया गया है।

स्थानीय नागरिक समाज के संगठनों के साथ चर्चा एवं उनके अभिलेखों तथा सरकार के आँकड़ों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि सामुदायिक वन अधिकार के 54 दावे डी.एल.सी. स्तर पर लम्बित हैं और उनमें से कुछ को पुनर्विचार के लिए एस.डी.एल.सी. को पुनः लौटा दिया गया है।

वर्ष 2012 में अतिरिक्त प्रधान सचिव ने वन भूमि पर अतिक्रमणों के विरुद्ध कार्रवाई करने के लिए एक आदेश[24] जारी किया। आदेश में वन एवं वन्य जीव अधिनियिमों के कई प्रावधानों का उल्लेख करते हुए सहायक वन संरक्षकों को स्मरण कराया गया कि उन्हें समयबद्धता के साथ बेदख़ली की प्रक्रिया को अन्जाम देने की आधिकारिक शक्तियाँ सौंपी गई हैं। आदेश में स्पष्ट रूप से कहा गया है, *"यदि मामला एफ.आर.ए. के अन्तर्गत लम्बित है तो उसका शीघ्र निपटान करने का अनुरोध किया जाए तथा मामले में लिए गए निर्णय के अनुसार उपयुक्त कार्रवाई की जाए।"*

राजस्थान सरकार ने जून 2013 में प्रधान मुख्य वन संरक्षक (वन बल के प्रमुख) {पी.सी.सी.एफ. (एच.ओ.एफ. एफ.)} को व्यक्तिगत वन अधिकार (आई.एफ.आर.) एवं सामुदायिक वन अधिकार (सी.एफ.आर.) के अधिकार पत्रों के अभिलेख अलग–अलग संधारित करने का आदेश[25] जारी किया। इस आदेश की अनुपालना में पी.सी. सी.एफ. ने आदेश[26] जारी किया कि विभाग की वैबसाइट पर स्वीकृत दावों का अद्यतन डाटा अपलोड किया जाए, जिससे कि ज़िला वन संरक्षकों (डी.सी.एफ.) के लिए स्वीकृत दावों के अभिलेखों को नियमित रूप से अद्यतन करना सहज हो।

---

21 मेहता, अजय एस., द माइक्रो–पॉलिटिक्स ऑफ डवलपमैण्टः एन अनाटॉमी ऑफ चेन्ज इन टू विलेजेस, उदयपुर. सेवा मन्दिर, 1995, पृष्ठ 3–4.

22 डिस्ट्रिक्ट वाइज़ परसेण्टेज फॉरेस्ट एरिया विथ रेफरैन्स टू जियोग्राफिकल एरिया एण्ड पर कैपिटा इन राजस्थान. वर्किंग प्लान एण्ड फॉरेस्ट सैटलमैण्ट सैल, राजस्थान स्टेट फॉरेस्ट डिपार्टमैण्ट (http://rajforest.nic.in), 15 सितम्बर, 2015 को पठित.

23 अनसर्वेड फॉरेस्ट एरिया इन उदयपुर डिविज़न (रिपोर्टिंग पीरियड जुलाई 2014–सितम्बर 2014), चीफ कन्ज़र्वेटर ऑफ फॉरेस्ट, उदयपुर, राजस्थान.

24 पत्र क्रमांक एफ1(86)फॉरेस्ट्स / 2007 दिनांक 02.05.2012.

25 पत्र क्रमांक एफ8(10)फॉरेस्ट्स / 2005 पार्ट दिनांक 12.03.2013.

26 पत्र क्रमांक एफ14(ट्रा. बिल)2013 / एफ.एस. / पी.सी.सी.एफ. / पार्ट–8 / 5087 दिनांक 03.06.2013.

## 3.4. ज़ोन–2: उत्तर–पूर्वी राजस्थान – अलवर (सरिस्का)

राजस्थान के जनजातीय आयुक्तालय द्वारा एफ.आर.ए. की जो सूची बनाई गई उसमें उत्तर–पूर्वी राजस्थान, जो कि गुर्जर आन्दोलन का टकराव का क्षेत्र रहा है, का उल्लेख नहीं है। यह क्षेत्र अपने राष्ट्रीय उद्यानों एवं अभयारण्यों के लिए जाना जाता है (अनुलग्नक–4)। इस क्षेत्र में एक बड़ा विवाद तब उठा जब किसानों ने भरतपुर स्थित केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान के लिए पाँचना बाँध के सिंचाई क्षेत्र से पानी दिए जाने से इनकार कर दिया[27]। नई सदी की शुरूआत के साथ ही सरिस्का तब चर्चा में आया जब यह पाया गया कि वहाँ के वन में बाघ बचे ही नहीं हैं[28]। जैसा कि होता है, इन ख़बरों से जो हंगामा बरपा उसमें बाघ के ख़ात्मे के लिए स्थानीय समुदायों (चरवाहे, जिन्हें महाराजा की ओर से सरिस्का के ओरण/पवित्र कुंजों में चरवाही के अधिकार दिए गए थे) को दोषी ठहराया गया। इसके जवाब में स्थानीय समुदाय संगठित हुए और एफ.आर.ए. पारित होने के साथ ही वन पर अपने अधिकार की माँग करने लगे।

अलवर स्थित संगठन 'कृपाविस', जिसने चरवाहा समुदायों को लामबन्द करने में भूमिका निभाई है, राजस्थान के जीन–पूल के रूप में ओरणों की प्रासंगिकता और उनके व स्थानीय समुदायों के अभिन्न रिश्ते को सामने लाने में अग्रणी रहा है। जन–अधिकारों के दस्तावेज़ीकरण की प्रक्रिया में यह स्पष्ट होता है कि यद्यपि अधिकारों के बन्दोबस्त की इकाई ग्राम सभा है, तथापि चरवाहों के उपयोग के अधिकार गाँव की सीमा में बंधे हुए नहीं हैं और उनके द्वारा भू–उपयोग का तरीका मौसम के अनुसार बदलता रहता है। हालाँकि यह तथ्य सभी को स्पष्ट है, किन्तु मान्यता देने की प्रक्रिया में इस पर ध्यान नहीं दिया गया है। इसके बजाय टाईगर रिज़र्व से लोगों को हटाने की प्रक्रिया पर ही सारा ज़ोर रहा है। ग्रामवासियों के विरोध और पहले के अनुभवों से उत्पन्न जटिलताओं ने इस प्रक्रिया को अस्थायी तौर पर रोक दिया है। किन्तु लोगों को मूलभूत सुविधायें उपलब्ध हों, यह सुनिश्चित करने के लिए अधिकारों की मान्यता के मुद्दे पर ज़ोर देने की ज़रूरत है।

### 3.4.क क्षेत्र का वर्णन

अलवर कस्बा, जहाँ ज़िला मुख्यालय है, के नाम से अलवर ज़िला जाना जाता है। यह ज़िला राजस्थान के उत्तर–पूर्व हिस्से में अवस्थित है। कृषि–पारिस्थितिकीय अनुक्षेत्र वर्गीकरण के अनुसार यह ज़िला उत्तरी मैदान (एवं मध्य पहाड़ी भू–क्षेत्र), जिसमें अरावली पर्वतमाला शामिल है, में आता है और यह गर्म अर्ध–शुष्क क्षेत्र है। यह ज़िला मुख्यतः दो कारणों से प्रसिद्ध है– सरिस्का टाइगर रिज़र्व और प्रचुर खनिज सम्पदा।

अलवर ज़िले की कुल जनसंख्या 30 लाख 60 हज़ार से अधिक है, जिसमें से 82.2 प्रतिशत लोग ग्रामीण क्षेत्र में और 17.8 प्रतिशत लोग शहरी क्षेत्र में निवास करते हैं। कुल आबादी में से अनुसूचित जाति 17.77 प्रतिशत और अनुसूचित जनजाति 7.87 प्रतिशत है। प्रमुख समुदायों में गुर्जर, ब्राह्मण, राजपूत, मीणा और मेव हैं, जबकि अन्य में अहीर, सैनी/माली, जाटव, कोली आदि शामिल हैं। अनुसूचित जाति में सर्वाधिक जाटव हैं और अनुसूचित जनजाति में मीणा सबसे अधिक हैं।

वन विभाग के अभिलेखों के मुताबिक अलवर में कुल वन क्षेत्र 2115.0224 वर्ग किलोमीटर (211502.24 हैक्टर) है, जिसमें से 90169 हैक्टर प्रादेशिक प्रभाग (टैरिटोरियल डिविजन) में और 121333.24 हैक्टर सरिस्का बाघ संरक्षित क्षेत्र (एस.टी.आर.) में शामिल है। एस.टी.आर. में शामिल क्षेत्र को 'कोर' व 'बफर' ज़ोन में विभाजित किया गया है। कोर एरिया 88111.24 हैक्टर है जबकि बफर ज़ोन में कुल मिलाकर 245.72 हैक्टर वन क्षेत्र

---

27 वॉटर इश्युज़ अराउण्ड भरतपुर एण्ड पंचना एण्ड इट्स कॉम्प्लीकेशन्स फॉर डिफरेण्ट स्टेकहोल्डर्स, जुनैद ख़ान कोमल, अरुण जिन्दल.

28 www.earthcarefilms.com/images/filming_tiger_crisis/.../Sariska.pdf, ग़ज़ाला शाहबुद्दीन.

एवं 86.50 हैक्टर राजस्व भूमि शामिल हैं। ज़िले में अधिसूचित वन क्षेत्र कुल भौगोलिक क्षेत्र का 25.24 प्रतिशत है। उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार अलवर ज़िले में प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र करीब 0.06 हैक्टर है। ज़िले का वन क्षेत्र अरावली पर्वतमाला के पूर्व में स्थित कुल वन क्षेत्र का 7.2 प्रतिशत है।

अलवर ज़िले में 2054 गाँव हैं, जिनमें से 2021 गाँव आबाद हैं जबकि 33 गाँव निर्जन हैं। ज़िले के कुल गाँवों में से 599 (29 प्रतिशत से अधिक) गाँवों में राजस्व क्षेत्र के तहत भू–उपयोग के लिए वन हैं।

भू–उपयोग के तहत (599) गाँवों में आने वाला वन क्षेत्र लगभग 161904 हैक्टर है, जो कि इन गाँवों का करीब 43 प्रतिशत क्षेत्र है और ज़िले के कुल भौगोलिक क्षेत्र का 19 प्रतिशत से अधिक है।

### 3.4.ख बन्दोबस्त एवं अधिकार

अलवर के भू–राजस्व बन्दोबस्त का इतिहास मध्यकाल तक जाता है एवं मुग़ल काल (करीब 1566) तक के दस्तावेज़ उपलब्ध हैं। मुग़ल काल में राजा टोडरमल द्वारा विकसित भू–राजस्व व्यवस्था मेवात क्षेत्र में प्रचलन में थी।[29] इसके उपरान्त, 1859 में ब्रिटिश काल के दौरान, कैप्टन इम्पे ने तीन वर्षों के 'अल्पकालीन बन्दोबस्त' (समरी सैटलमैण्ट) किए; ये वर्ष हैं 1859–60, 1860–61 व 1861–62। दिसम्बर, 1861 में कैप्टन इम्पे ने पुनः 10 वर्षों के बन्दोबस्त का प्रस्ताव रखा, जिसका काल 1862–63 से 1871–72 था। सन् 1872 में मेजर पॉलेट ने चार वर्ष का अल्पकालीन बन्दोबस्त तैयार किया और अन्ततः उन्होंने पहला 'नियमित बन्दोबस्त' (रेग्युलर सैटलमैण्ट) 1877 में किया (इसे 16 वर्षीय बन्दोबस्त भी कहा गया)[30]। दूसरा नियमित बन्दोबस्त सर माइकल ओ' डायर ने 1899–1900 में किया (इसे 20 वर्षीय बन्दोबस्त भी कहा गया)। तीसरा नियमित बन्दोबस्त का आरम्भ 1920 में राय बहादुर होती सिंह ने किया, जिसे राय साहब पण्डित नन्दलाल टिक्कू ने 1924 में पूरा किया। सन् 1935 में सर एफ.वी. वीली ने मियाँ उदय सिंह[31] की मदद से तीसरे नियमित बन्दोबस्त का पुनरीक्षण शुरू किया; इसमें काफी विलम्ब हुआ क्योंकि आरक्षित और संरक्षित वन क्षेत्रों की हदबन्दी के मामले लम्बित थे जो कि राजस्व विभाग से सम्बन्धित थे; अन्ततः 1947 में श्री राम प्रताप ने इसे पूर्ण किया (इसे 'पीली किताब' या 'यैलो बुक' भी कहा गया)[32]।

जंगल और वन उपज के पारगमन के कानूनों में संशोधन और उन्हें सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से विभिन्न बन्दोबस्तों के बीच 'द अलवर फॉरेस्ट रैग्युलेशन ऑफ 1919' और 'द अलवर फॉरेस्ट रैग्युलेशन–II ऑफ 1935' लागू किए गए। 1919 व 1935 के दोनों ही फॉरेस्ट रैग्युलेशन में कुछ ऐसे नियम भी लागू किए गए, जो उन अभिलिखित अधिकारों से संगति रखते थे जो आरक्षित वन, संरक्षित वन, रून्ध व बनी सरीखी विभिन्न श्रेणियों[33] में व्यक्तियों या समुदायों को दिए गए थे। ऐसे क्षेत्र जो इससे पहले अधिकारों के उपयोग के लिए खुले थे उन्हें बन्द कर दिया गया और उनके उपयोग का अधिकार वन विभाग को दे दिया गया, जो चराई[34] और वन उत्पादों के एकत्रीकरण के लिए परम्परानुसार शुल्क वसूलने लगा।

29 मुग़ल काल में अलवर सहित तिजारा, नामौल, रोहतक, गुड़गाँव और भरतपुर का क्षेत्र मेवात कहलाता था.

30 पहला 'नियमित बन्दोबस्त' मूलतः 16 वर्षों के लिए स्वीकृत किया गया था, किन्तु 1877–78 के अकाल और उसके बाद के कम राजस्व के वर्षों के कारण यह 24 वर्षों तक जारी रहा (मायाराम द्वारा रचित 'राजस्थान डिस्ट्रिक्ट गज़ेटियर ऑफ अलवर, 1968').

31 मियाँ उदय सिंह द्वारा रचित 'फॉरेस्ट सैटलमैण्ट रिपोर्ट ऑफ अलवर स्टेट, 1937'.

32 राम प्रताप द्वारा रचित 'द अलवर स्टेट फॉरेस्ट सैटलमैण्ट रिपोर्ट (येलो बुक), 1947'.

33 आरक्षित वन – चिह्नित वन क्षेत्र जहाँ, महाराज के आदेशों से, जनता को कोई वन अधिकार नहीं था; संरक्षित वन – वन क्षेत्र जो कि वन विभाग के अधीन थे और जहाँ ज़मीनदारों को कुछ अधिकार या विशेषाधिकार थे; रून्ध – राज्य के ईंधन और चारे के लिए परिरक्षित वन क्षेत्र, ये महाराज की संरक्षित शिकारगाहें भी थीं; बनी – पवित्र कुंज.

34 'द अलवर फॉरेस्ट रैग्युलेशन ऑफ 1919' (ग्रेज़िंग रूल्स).

अलवर में ग्राम समुदाय के अधिनस्थ मालिकाना हक या बिस्वेदारी (भू–स्वामित्व) को लम्बे समय से मान्यता मिली हुई थी हालाँकि प्रधान स्वामी के रूप में राज्य को उनके ऊपर सम्प्रभु अधिकार प्राप्त थे। तीसरे बन्दोबस्त के पुनरीक्षण के समय तक 140000 बीघा (35410 हैक्टर से अधिक) बंजर भूमि और पहाड़ियों को, जो कि दूसरे नियमित बन्दोबस्त के बाद वन में शामिल किए गए थे, बिस्वेदारों को फिर से सौंप दिया गया था जबकि रून्ध और बनी को आरक्षित वन के रूप में तथा सभी अधिकारों से मुक्त रखा गया था। दूसरे नियमित बन्दोबस्त में कुछ अधिकारों जैसे कि चराई, घास कटाई, जलाऊ लकड़ी और इमारती लकड़ी को इकट्ठा करने की अनुमति दी गई थी लेकिन 1947 के बन्दोबस्त में 40 वर्ष पूर्व दिए गए अधिकारों को समाप्त कर संशोधित अधिकार दिए गए, जिनमें निम्नलिखित अधिकार शामिल हैं –

i. चराई (केवल मवेशी)

ii. घास को काटकर ले जाना

iii. वास्तविक घरेलु आवश्यकताओं के लिए सूखी और मृत्त लकड़ी को इकट्ठा करना

iv. घर बनाने की सामग्री और खेती के उपकरणों के लिए गीली लकड़ी को इकट्ठा करना

v. वन–पथ और वन रून्ध से होकर रास्ता

vi. आरक्षित वन से गुज़रने वाले वर्तमान जलमार्गों, जो कि स्थानीय लोगों द्वारा अनुरक्षित हैं, का उपयोग

vii. तेन्दू के और खजूर के फलों को इकट्ठा करना

viii. पूर्व में दी गई अन्य रियायतें

आज़ादी के बाद, पुरानी व्यवस्था से निजात पाने के लिए, राजस्थान सरकार ने 'राजस्थान वन अधिनियम–1953', 'राजस्थान भू राजस्व अधिनियम–1956' और 'राजस्थान वन (बन्दोबस्त नियम)–1958' पारित किए। वर्तमान वन बन्दोबस्त 'राजस्थान वन अधिनियम–1953' तथा 'राजस्थान वन (बन्दोबस्त नियम)–1958' पर आधारित है और तब से अब तक इसका पुनरीक्षण नहीं किया गया है।

### 3.4.ग सरिस्का टाईगर रिज़र्व[35] (क्रिटिकल टाईगर हैबिटाट का मुद्दा एवं गाँवों का पुनर्वास)

'वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम–1972' के अनुच्छेद 38V 4(i) में कोर/क्रिटिकल टाईगर हैबिटाट की पहचान के बारे में स्पष्ट किया गया है कि यह बाघ के प्रजनन का अनुल्लंघनीय क्षेत्र है। इसके साथ ही, 2006 में संशोधित यह अधिनियम बिल्कुल स्पष्ट करता है कि क्रिटिकल टाईगर हैबिटाट का निर्धारण वैज्ञानिक एवं वस्तुनिष्ठ आधार पर किया जाएगा, जिसमें ग्राम सभा एवं विशेषज्ञ समिति की राय ली जाएगी और अनुसूचित जनजाति या ऐसे अन्य वनवासियों के अधिकारों का हनन नहीं किया जाएगा। राजस्थान सरकार ने इस अधिनियम के प्रावधानों का सन्दर्भ लेते हुए दिसम्बर, 2007 में सरिस्का बाघ संरक्षित क्षेत्र के 881.1124 वर्ग किलोमीटर कोर एरिया को 'क्रिटिकल टाईगर हैबिटाट' (क्राँतिक बाघ आवास) घोषित किया।[36]

इसी दौरान वन अधिकार अधिनियम भी लागू हुआ, जिसके अनुच्छेद 4(2) (क से च) के प्रावधानों के अनुसार नेशनल पार्क या अभयारण्यों के क्राँतिक वन्य जीव आवास में मान्यता प्राप्त वन अधिकारों में बदलाव करने से पहले कुछ शर्तों को पूरा करना ज़रूरी है। इन शर्तों में यह भी शामिल है कि 'इस तथ्य को स्थापित किया जाए कि अधिकार प्राप्त (निवासियों) की गतिविधियाँ और मौजूदगी उल्लेखित प्रजाति को अपूरणीय क्षति

---

35 देखें अनुलग्नक–13: सरिस्का टाईगर रिज़र्व (गाँव का नक्शा).

36 राजस्थान सरकार का गज़ेट नोटिफिकेशन (एक्ट्राऑर्डिनरी) एफ3(34) फॉरेस्ट 2007, दिनांक 28 दिसम्बर, 2007.

पहुँचाने वाली और उनके अस्तित्व को चुनौती देने वाली है, तथा इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा चुका है कि अन्य सभी सम्भव विकल्प जैसे कि सह–अस्तित्व सम्भव नहीं हैं।' वन अधिकार अधिनियम के तहत शर्तों में ग्राम सभा की स्वतन्त्र सुविज्ञ सहमति तथा पुनर्वास का/सुरक्षित आजीविका का वैकल्पिक पैकेज का प्रावधान भी शामिल थे।

वर्ष 2011 में एन.टी.सी.ए. (नेशनल टाइगर कन्ज़र्वेशन अथॉरिटी – राष्ट्रीय बाघ संरक्षण प्राधिकरण) ने, वन्य जीव संरक्षण अधिनियम और वन अधिकार अधिनियम के उपर्युक्त वर्णित प्रावधानों से अनुकूलता सिद्ध करते हुए, टाइगर रिज़र्वों के अधिसूचित कोर/क्रिटिकल टाइगर हैबिटाटों में स्वैच्छिक ग्राम पुनर्वास के लिए प्रोटोकॉल/दिशा–निर्देश जारी किए।[37]

राज्य के वन विभाग ने एन.टी.सी.ए. के दिशा–निर्देशों तथा राष्ट्रीय पुनर्वास एवं पुनर्स्थापन नीति, 2007 और राजस्थान राज्य ग्राम पुनर्वास नीति, 2002 के प्रावधानों का अनुसरण करते हुए स्वैच्छिक ग्राम पुनर्वास योजना बनाई। पुनर्वास योजना दो विकल्प देती है – (1) पुनर्वास की प्रक्रिया के बग़ैर सम्पूर्ण पैकेज की राशि रु.10 लाख प्रति परिवार का भुगतान, या, (2) रु.10 लाख प्रति परिवार का पुनर्स्थापन/पुनर्वास पैकेज (कुल पैकेज को पाँच श्रेणियों में प्रतिशत में समेकित करते हुए) – कृषि भूमि (2 हैक्टर) की ख़रीद एवं उसका विकास (35 प्रतिशत), अधिकारों का बन्दोबस्त (30 प्रतिशत), आबादी भूमि एवं आवास निर्माण (20 प्रतिशत), प्रोत्साहन (5 प्रतिशत) तथा सामुदायिक सुविधायें (10 प्रतिशत)।

एन.टी.सी.ए. के दिशा–निर्देशों के अनुसार गाँव के पुनर्वास से पहले अधिकारों को मान्यता/बन्दोबस्त के लिए वन अधिकार अधिनियम के अनुच्छेद 6 के प्रावधानों को पूर्ण करना आवश्यक है। वन अधिकार के अभिलेखों की अन्तिम स्वीकृति से पूर्व ग्राम सभा की स्वीकृति का उपखण्ड स्तरीय समिति (एस.डी.एल.सी.) एवं तत्पश्चात ज़िला स्तरीय समिति (डी.एल.सी.) द्वारा परीक्षण किया जाना चाहिए।

सरिस्का बाघ संरक्षित क्षेत्र के भीतर और आसपास करीब 175 गाँव हैं। इनमें से 29 गाँव क्रिटिकल टाईगर हैबिटाट में हैं जिनमें 2254 परिवार बसे हैं; जबकि 146 गाँव बफर–ज़ोन में हैं जिनमें 12000 परिवार बसे हैं। चरणबद्ध योजना के अनुसार 2021–22 तक क्रिटिकल टाईगर हैबिटाट से सभी गाँवों का पुनर्वास कर दिया जाना है; दो गाँवों का पुनर्वास किया जा चुका है, जबकि प्राथमिकता के आधार पर पुनर्वास के लिए 12 अन्य गाँवों की छंटनी की जा चुकी है।

प्राप्त जानकारी के अनुसार 10 गाँवों के पुनर्वास के लिए सम्बन्धित ग्राम सभाओं से सहमति प्राप्त की जा चुकी है। इसके अलावा यह भी ज्ञात हुआ कि एन.टी.सी.ए. के दिशा–निर्देशों की अनुपालना में फरवरी, 2012 में गाँवों के पुनर्स्थापन एवं पुनर्वास की निगरानी के लिए के लिए राज्य स्तरीय निगरानी समिति तथा ज़िला स्तरीय कार्यान्वयन समिति का गठन किया जा चुका है।

दरअसल, वन्य जीव (संरक्षण) संशोधन अधिनियम, 2006 और वन अधिकार अधिनियम, 2006 ने क्रिटिकल बाघ/वन्य जीव आवासों से समुदायों के पुनर्वास की प्रक्रिया के बारे में और विस्थापन से पहले ही उनके अधिकारों के बन्दोबस्त के सम्बन्ध में उल्लेखनीय सुधार किए; यह केवल भावना में ही व्यक्त नहीं किया गया बल्कि इसे अनिवार्य किया गया। हालाँकि प्राधिकारियों को संशोधित अधिनियमों एवं दिशा–निर्देशों की अनुपालना करने की कोई चिन्ता नहीं है।

---

37 एफ.नं. 15–4/2010–एन.टी.सी.ए. (भाग–3) केन्द्र द्वारा पोषित प्रोजेक्ट टाईगर के नए अंशों से सम्बन्धित अतिरिक्त दिशा–निर्देश, वन एवं पर्यावरण मन्त्रालय, भारत सरकार, एन.टी.सी.ए., दिनांक 28 नवम्बर 2011.

### 3.4.घ क्रिटिकल टाईगर हैबिटाट से स्वैच्छिक ग्राम पुनर्वास में एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन हेतु प्रावधान

एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन के बारे में राज्य की प्रगति रिपोर्ट में अलवर ज़िले का कोई अभिलेख नहीं है; इसके साथ ही अलवर वन खण्ड की कार्ययोजना में ज़िले में एफ.आर.ए. के अन्तर्गत किसी भी दावे का उल्लेख नहीं हैं।[38] एफ.आर.ए., 2006 और वन्य जीव संरक्षण अधिनियम, 1972 के प्रासंगिक प्रावधानों के अन्तर्गत टाइगर रिज़र्व के कोर/क्रिटिकल टाइगर हैबिटाट से गाँवों के पुनर्वास के रास्ते तलाशने के उल्लेख के सिवाय सरिस्का टाइगर रिज़र्व की बाघ संरक्षण योजना में भी एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन का कोई अभिलेख नहीं है।[39] यद्यपि एन.टी.सी.ए. यह स्पष्ट करता है कि पुनर्वास 'स्वैच्छिक' होगा किन्तु यह 'जबरन' ही करवाया जा रहा है।

'कृपाविस' से चर्चा के साथ ही क्षेत्र के दौरे और ग्राम समुदायों के साथ बैठकों से यह महसूस हुआ कि वन्य जीव संरक्षण अधिनियम और एफ.आर.ए. के प्रावधानों की पालना कभी की ही नहीं गई। ऐसा लगता है कि क्रिटिकल टाइगर हैबिटाट की घोषणा के सम्बन्ध में स्थानीय लोगों से परामर्श नहीं किया गया। इसके बजाय गाँववासियों को सीधे ही पुनर्वास पैकेज के तहत् दो विकल्प दिए गए और एक अन्तिम तिथि दे दी गई जिसके भीतर उन्हें एक विकल्प को चुनना है अन्यथा इस तिथि के बाद उन्हें किसी विकल्प के लिए कोई समय नहीं दिया जायेगा और उनके लिए एकमुश्त रु.10 लाख का विकल्प स्वतः मान लिया जाएगा और उन्हें बेदख़ल कर दिया जाएगा।

**बॉक्स–1**

**क्रिटिकल टाइगर हैबिटाट के आसपास खनन**

आधिकारिक अभिलेखों के अनुसार क्रिटिकल टाइगर हैबिटाट से 700 मीटर की दूरी के बीच 90 हैक्टर से अधिक क्षेत्र में 61 खनन पट्टे हैं तथा बफर ज़ोन के भीतर 24 खनन पट्टे हैं। यह ध्यान देने योग्य है कि क्रिटिकल टाइगर हैबिटाट की सीमा से 50 मीटर की दूरी में 4 खदानें और महज़ 5 मीटर की दूरी में चार खदानें हैं! किन्तु बाघ के रहवास एवं बचे रहने को लेकर पहले होने वाली एवं वर्तमान में जारी खनन गतिविधियों को उतनी गम्भीरता से नहीं लिया गया, जितनी गम्भीरता से गाँव के पुनर्वास को लिया गया।

गाँव के पुनर्वास के पहले अधिकारों की स्वीकृति/बन्दोबस्त के एफ.आर.ए. के प्रावधानों की पालना ना तो एन.टी.सी.ए. के दिशा–निर्देशों के पहले और ना ही बाद में कभी की गई। गाँववासियों को एफ.आर.ए. के प्रावधानों के बारे में बताया ही नहीं गया और पुनर्वास के लिए ग्राम सभा की 'स्वतन्त्र सहमति' (एफ.आर.ए. के प्रावधानों के अनुसार) कभी नहीं ली गई। इसी प्रकार, अधिकारों की मान्यता की कोई प्रक्रिया कभी अपनाई नहीं गई। वन अधिकार अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार सरिस्का टाइगर रिज़र्व के भीतर व आसपास के गाँवों के सम्बन्ध में वन अधिकार समितियों (एफ.आर.सी.), एस.डी.एल.सी. व डी.एल.सी. के गठन का कोई अभिलेख प्राप्त नहीं होता है ('कृपाविस' के दख़ल से ही कुछ जगह समुचित प्रक्रिया को अपनाते हुए ग्राम सभा की बैठकें हुईं, जिनमें बहुमत के द्वारा वन अधिकार समितियों का गठन किया गया)। गाँवों के पुनर्स्थापन एवं पुनर्वास के लिए गठित राज्य स्तरीय निगरानी समिति और ज़िला स्तरीय कार्यान्वयन समिति का एफ.आर.ए. के अन्तर्गत एस.डी.एम.सी. व डी.एल.सी. के साथ अनुकूलन नहीं माना जा सकता है।

---

38 फॉरेस्ट वर्किंग प्लान ऑफ अलवर डिस्ट्रिक्ट (2012–13 से 2021–22) पृष्ठ 195–196.

39 प्रोटोकॉल/गाईडलाइन्स फॉर वॉलण्टरी विलेज रीलोकेशन इन नोटिफाइड कोर/क्रिटिकल टाइगर हैबिटाट्स ऑफ टाइगर रिज़र्व्स, लैटर नं. 15.4/2010–एन.टी.सी.ए. (पार्ट–3) डेटेड 28 नवम्बर, 2011.

**बॉक्स–2**

### राजस्थान में पर्यावरण सम्बन्धी अपराध

वर्ष 2014 के दौरान देश भर में पर्यावरण सम्बन्धी अपराधों के 5835 मामले दर्ज किए गए। इनमें से सर्वाधिक मामले राजस्थान से थे (5835 में से 2927), जो कि ऐसे कुल मामलों का 50.2 प्रतिशत थे।

इन 5835 मामलों में से 4901 मामले वन अधिनियम के अन्तर्गत दर्ज किए गए थे, जो कि कुल मामलों का 84.0 प्रतिशत है। इसके बाद सर्वाधिक मामले वन्य जीव संरक्षण अधिनियम के अन्तर्गत (770 मामले) दर्ज किए गए थे।

वन अधिनियम (2666) और वन्य जीव संरक्षण अधिनियम (219) के अन्तर्गत सर्वाधिक मामले राजस्थान में दर्ज हुए।

पर्यावरण से सम्बन्धित सभी अपराधों में कुल 8684 लोगों को गिरफ्तार किया गया, जिनमें 8666 पुरुष व 18 महिलाएँ थीं। इनमें से अधिकतर गिरफ्तारियाँ राजस्थान (3320) में हुईं, जिनमें वन अधिनियम के तहत 2913 और वन्य जीव संरक्षण अधिनियम के तहत 352 लोगों को गिरफ्तार किया गया।

.................................................................................................................................

स्रोतः एनवायरन्मैण्ट रिलेटेड ऑफेन्सेज़. पृष्ठ 182–183. www.ncrb.gov.in

## 4. आरम्भ की गई प्रक्रियाओं की रिपोर्ट[40]

### 4.1 प्रविधि

### 4.1.क नमूने के लिए क्षेत्रों का चयन

उपर्युक्त उल्लिखित बिन्दु 3.2 में वर्णित।

### 4.1.ख दत्त सामग्री (डाटा) संग्रहण

**प्राथमिक डाटा** गाँवों से संग्रहित किया गया; इसके लिए उदयपुर के क्षेत्र में ग्रामवासियों की सहायता ली गई जो कि आर.एम.के.यू. के सदस्य भी थे और अलवर के क्षेत्र में 'कृपाविस' के कार्यकर्ताओं की सहायता ली गई।

- कार्योन्मुख मानचित्रण की प्रक्रिया दोनों ही क्षेत्रों में अपनाई गई {समुदाय द्वारा संसाधनों एवं थल–चिह्नों सहित पारम्परिक सीमाओं के मानचित्र बनाए गए (उदयपुर में 53 व अलवर में 05)}। गाँववासियों ने गाँव के भीतर एवं आसपास उपलब्ध संसाधनों के वितरण एवं उन तक पहुँच के पारम्परिक मार्गों को आरेखित किया, जैसे कि बसावट, जंगल, चारागाह, थल–चिह्न (लैण्डमार्क), जल संसाधन, पवित्र स्थल, समीपस्थ गाँव आदि।

- पारिस्थितिकीय पंचांग (ईको कैलेण्डर), जिसमें एक वर्ष के दौरान विभिन्न ऋतुओं में की जाने वाली विविध गतिविधियों का अंकन किया जाता है, ग्राम स्तरीय अभ्यास के दौरान बनाए गए। अलग–अलग मौसमों में ग़ैर–इमारती लकड़ी उत्पाद (एन.टी.एफ.पी.) के संग्रहण के अलावा, चरवाही, फसलें तथा आजीविका से जुड़ी एवं सामाजिक गविविधियों को दर्शाया गया, जैसे कि स्थानीय पलायन, विभिन्न वन खण्डों तक पहुँच, पवित्र कुंजों में व अन्य तीर्थ स्थलों पर सामाजिक गतिविधियाँ, कृषि से जुड़ी अन्य गतिविधियाँ, इत्यादि।

- विषय केन्द्रित समूह परिचर्चा की गईं, जिनमें आई.एफ.आर. के दावेदारों के साथ ही गाँव के लोग सम्मिलित हुए। इन ग्रामवासियों में वन संरक्षण समितियों, पारिस्थितिकी विकास समितियों, जे.एफ.एम. समितियों, जातिगत समूहों के नेता आदि भी थे।

  वन अधिकार समितियों के सदस्यों एवं अन्य ग्रामवासियों के वीडियो साक्षात्कार भी लिए गए।

- बैठकें एफ.आर.सी. के सदस्यों के साथ की गईं (जहाँ लोग एफ.आर.सी. में अपनी स्थिति के प्रति जागरूक थे)। एफ.आर.सी. के सदस्यों के साथ अलग से बैठकें की गईं जिनका उद्देश्य उनके मनोनयन की प्रक्रिया, उन्मुखीकरण, अपनी भूमिका व ज़िम्मेदारियों के साथ ही कार्य पद्धति के प्रति जागरूकता और एफ.आर.ए. –विशेषकर सामुदायिक वन अधिकार– को लेकर उनके अनुभव को जानना था। इसके लिए मौखिक चर्चा एवं वीडियो साक्षात्कार दोनों ही माध्यमों का उपयोग किया गया।

- साक्षात्कार वन विभाग के अधिकारियों (डी.सी.एफ., ए.सी.एफ., आर.एफ.ओ. आदि), पंचायती राज संस्थाओं के प्रतिनिधि, नागरिक समाज की संस्थाओं के प्रतिनिधियों आदि के साथ किए गए।

---

40 प्रक्रिया का आरम्भ वीरेन लोबो ने किया, जो ए.आई.एफ.एफ.–आर.एस. के क्षेत्रीय समन्वयक एवं सलाहकार सदस्य हैं.

**द्वितीयक सामग्री** सरकारी कार्यालयों व क्षेत्र में कार्यरत कर्मचारियों व अधिकारियों, सरकार के पुरालेखों, एन.टी.सी.ए., केन्द्र एवं राज्य सरकारों के विभागों की आधिकारिक वैबसाइटों एवं अन्य ऑनलाइन स्रोतों, नागरिक समाज के संगठनों के पुस्तकालयों और हितधारकों इत्यादि से प्राप्त की गई।

### 4.1.ग ग्राम स्तरीय बैठकें

ग्राम स्तरीय बैठकों का आयोजन साझा संसाधनों के बारे में समुदाय के नज़रिए और साझा उद्देश्य के लिए सामुदायिक विवादों का निपटारा करने की तत्परता का आकलन करने के लिए किया गया, जिससे कि सामुदायिक वन अधिकार के माध्यम से वे एफ.आर.ए. का निर्विवाद लाभ प्राप्त कर सकें।

### 4.1.घ पारम्परिक सीमाओं का सहभागी मानचित्रण

अलवर के ग्राम बख़्तपुरा में, नमूने के तौर पर, पारम्परिक सीमाओं के सहभागी मानचित्रण का एक अभ्यास किया गया। क्षेत्र में जी.पी.एस. (ग्लोबल पोज़िशनिंग सिस्टम) यन्त्र एवं मोबाईल जी.पी.एस. का उपयोग करना बताया गया। सॉफ्टवेयर में दत्त सामग्री (डाटा) को अपलोड करना एवं उनके प्रसंस्करण का प्रदर्शन भी किया गया। इस अभ्यास में ग्रामवासी व 'कृपाविस' के कार्यकर्ता शामिल हुए।

### 4.1.च सहभागी जी.पी.एस. सीमांकन

स्थानीय समुदाय के लोगों को सम्मिलित करते हुए अलवर (5) एवं उदयपुर (53) में नमूने के तौर पर चयनित गाँवों की जी.पी.एस. अवस्थिति दर्ज की गई। उन्हें जी.पी.एस. के संचालन का प्रशिक्षण दिया गया तथा क्षेत्र में भी सहज किया गया। जी.पी.एस. से दर्ज किए गए डाटा को 'गूगल अर्थ' पर अपलोड किया गया जिससे कि बसावटों, संसाधनों एवं साझा पहुँच वाले वन खण्डों के वितरण का आकलन किया जा सके।

### 4.1.छ एटलस मैप्स में गाँवों का चित्रण

सम्भावित सी.एफ.आर. गाँवों के विस्तार एवं सीमांकन को दर्शाने के लिए सैन्सस एटलस में नमूने के तौर पर चयनित गाँवों की पहचान एवं स्थान निर्धारण कर उन्हें स्पष्ट रूप से चिह्नित किया गया।

### 4.1.ज दावों की फाइलों की समीक्षा

नागरिक समाज के संगठनों और स्वयं दावेदारों के द्वारा तैयार की गई सी.एफ.आर. एवं आई.एफ.आर. की फाइलों (जमा/तैयार की जा रही/लम्बित मामले/अस्वीकृत) की समीक्षा की गई।

## 4.2 वानिकी के मुद्दों एवं वन में निवास करने वाले समुदायों के लिए उनकी प्रासंगिकता पर रणनीतिक बैठक

इन्स्टीट्यूट फॉर इकॉलॉजी एण्ड लाइवलीहुड एक्शन, 'कृपाविस', जंगल ज़मीन जन आन्दोलन व 'शक्ति' के संयुक्त तत्त्वावधान में जुलाई, 2015 में एक बैठक हुई, जिसमें अन्य विषयों के अलावा सामुदायिक वन अधिकार के मुद्दे का समन्वेषण किया गया। जंगल ज़मीन जन आन्दोलन, राजस्थान मज़दूर किसान यूनियन तथा वन उत्थान संघ, सेवा मन्दिर, आस्था, डॉ. रज़ा एच. तहसीन (राजस्थान के प्रसिद्ध वन्य जीव विशेषज्ञ) के साथ ही उपर्युक्त वर्णित सह–आयोजकों ने चर्चा में सक्रिय भागीदारी निभाई। बैठक के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैं:

1. वानिकी के मुद्दों एवं वन में निवास करने वाले समुदायों के लिए उनकी प्रासंगिकता के सन्दर्भ में सी.एफ.आर. के राजनीतिक निहितार्थों पर डॉ. सुनील दुबे की रिपोर्ट और चेन्चु वर्ल्ड पर 'शक्ति' की रिपोर्ट[41] पर विस्तार से चर्चा हुई।
2. 26 से 29 जुलाई, 2015 के बीच उदयपुर ज़िले में चार स्थानों पर ग्राम समुदायों के साथ इन मुद्दों पर चर्चा करने के लिए आर.एम.के.यू. और वन उत्थान संघ के सदस्यों के साथ एक योजना बनाई गई। इसी प्रकार का एक कार्यक्रम सरिस्का के जंगल में निवास करने वालों के साथ 'कृपाविस' की सहायता से 1 से 3 अगस्त, 2015 तक तय किया गया।
3. ऐतिहासिक दृष्टिकोण के लिहाज़ से निम्नलिखित बातें सामने आईंः

   क. सैण्ट्रल प्रॉविन्स अजमेर के अलावा राजस्थान के अधिकतर भाग पर रियासती राज्यों का शासन था। जनता को रियायतें देने के राजाओं के अपने तरीके थे, जिसका एक उदाहरण सरिस्का के ओरण हैं।

   ख. आज़ादी के बाद अधिकारों का दावा करने के लिए जंगलों का सफाया करने के अभियान चले।

   ग. उदयपुर में, सन् 1956 के बन्दोबस्त के अनुसार, आबादी क्षेत्र एवं वन क्षेत्रों का सीमांकन 1970 तक कर दिया गया। सन् 1980 के पश्चात बसावट की नैसर्गिक प्रक्रिया को तब झटका लगा जब वन में बसे लोगों को ग़ैरकानूनी घोषित कर दिया गया। राजस्थान में भी साझा भूमि को निजी व्यक्तियों एवं अन्य को आवंटित करने का इतिहास रहा है और इस तरह पुराने तानेबाने को नष्ट किया जाने लगा। अस्सी के दशक में 'प्रयास' ने बताया था कि सरकार की नीतियाँ किस प्रकार से कृषि का पक्षपोषण कर रही हैं जिससे कि शनैः शनैः वनों का विनाश हो रहा है।

   घ. संयुक्त वन प्रबन्धन (जे.एफ.एम.) ने वनों के विनाश को रोकने और उनके संरक्षण को बढ़ावा देने में मदद की। किन्तु, इसमें वन–क्षेत्र में कृषि कार्य को शामिल नहीं किया गया था इसलिए 'आस्था' व अन्य संस्थाओं ने इसका विरोध किया। इस प्रकार, यह स्वाभाविक था कि प्रारम्भिक चरणों में एफ.आर.ए. में व्यक्तिगत वन अधिकार के दावे ही अधिक पेश हुए। कई क्षेत्रों में लोगों ने वनों को काटकर अपना अधिकार जताया (अनुलग्नक–10)। सी.एफ.आर. की प्रक्रिया कुछ ही जगहों तक सीमित है और एन.जी.ओ. द्वारा व राजनीतिक प्रक्रियाओं के तहत समुदाय की लामबन्दी से जुड़ी हुई है। इसका और अधिक विस्तार से परीक्षण करने की आवश्यकता है।

   च. इसके साथ ही, इसमें चरवाही के आयाम को भी शामिल किया जाना चाहिए।

4. वर्तमान में हमारे सामने मौजूद नई परिस्थितियों एवं कुछ वैज्ञानिक आयामों के सन्दर्भ में डॉ. रज़ा एच. तहसीन ने वन्य जीवों के मुद्दे को विस्तार से उद्घाटित किया, जिसके मुख्य बिन्दु निम्नलिखित हैंः

   क. प्रकृति में चयन एवं ख़ात्मे की प्रक्रिया (कलिंग) चलती रहती है।

   ख. माँस, जनजातियों की प्रोटीन की ज़रूरतें पूरी करने वाले आहार का हिस्सा है। उनके द्वारा शिकार करने को इस परिप्रेक्ष्य में भी देखा जाना चाहिए।

---

41 चेन्चु वर्ल्ड इन नल्लामल्ला फॉरेस्ट – ट्रैडिशनल नॉलेज एण्ड प्रॉब्लम्स ऑफ पी.वी.टी. (पर्टिक्युलर वल्नरेबल ट्राइब) इन आन्ध्र–प्रदेश, शक्ति हैदराबाद द्वारा प्रकाशित.

ग. चरवाहों द्वारा, महज़ चन्द मिनिटों में, अपने झुण्ड की पहचान एवं गणना कर लेने के पीछे का विज्ञान क्या है? जनजातियों के पास ऐसी मेधा है जो हमारी कल्पना के बाहर है। उनकी इस मेधा को स्वीकार करने और उसे पोषित करने की आवश्यकता है।

घ. माँसाहारी पशुओं द्वारा मवेशियों को उठा ले जाना कोई नई बात नहीं है। सदियों से ऐसा हो रहा है तो अब हमें क्या समस्या हो गई है? क्षतिपूर्ति की प्रक्रिया बहुत परेशान करने वाली है और मुआवज़ा राशि भी मामूली है।

च. टैक्सास में, नियन्त्रण में, 5000 से अधिक बाघों का पालन–पोषण किया जा रहा है, और यह संख्या पूरे भारत में बाघों की संख्या से अधिक है।

छ. सी.एफ.आर. के अधिकारों का उपयोग रहवास के संरक्षण में किया जा सकता है और इको–टूरिज़्म के केन्द्र में लोग होने चाहिएँ ना कि उसका व्यावसायिक संस्करण (अनुलग्नक–11) जो कि सामान्यतः प्रकृति को और विशेषकर बाघों को फ्लैशबल्ब फोटोग्राफी की वस्तु मात्र बनाकर रख देता है।

5. अमन सिंह ने चरवाहों की जटिल चराई व्यवस्था के बारे में बात की जिसमें वहन क्षमता को ध्यान में रखा जाता है। यह एक स्थल पर ठहरी हुई ना होकर गतिशील व आवर्तनशील है। चरवाहों के इस ज्ञान की कद्र नहीं की गई है।
6. सुरेश शर्मा ने प्राकृतिक संसाधनों पर समुदाय के नियन्त्रण के लिए अपना संघर्ष स्वयं करने की समुदायों की तत्परता के बारे में बात की।
7. अन्य लोगों ने भी अपने विचार व्यक्त किए।
8. यह सहमति बनी कि ऐतिहासिक अन्याय को दुरुस्त करने के लिए आजीविका एवं संरक्षण दोनों पर ध्यान केन्द्रित करने की ज़रूरत है। जन का विज्ञान और आधुनिक विज्ञान के सम्मिश्रण को शोषणकारी प्रक्रियाओं से आज़ाद कराना होगा, जिसमें प्रकृति का टिकाऊ विकास भी शामिल है। वन विभाग का इतिहास वनों के दोहन का रहा है। अतः, वन विभाग ने जो 'वैज्ञानिक पद्धति' विकसित की है वह अपने मूल में शोषणकारी है और प्रकृति का संरक्षण नहीं कर सकती है। आवश्यकता इस बात की है कि वन में निवास करने वाले लोगों के अन्धविश्वासों व आधुनिक सन्दर्भ में 'अप्रासंगिक' प्रथाओं को छोड़ते हुए, उनकी 'वैज्ञानिक पद्धतियों' से सीखा जाए।
9. शिवरामाकृष्ण ने वन पर निर्भरता की प्रकृति के उदाहरणों को इंगित किया, जैसे कि भारत की जनगणना में ग्राम सर्वे के नाम–चिह्न (मोनोग्राम)। उन्होंने इस ओर भी इशारा किया कि यदि जनजातियों के लोगों को 'अभिशासन के तौर–तरीकों' पर पकड़ हासिल हो जाए तो वे सरकारी अधिकारियों, एम.एल.ए व अन्य को किस प्रकार उनकी ज़िम्मेदारियों की कसौटी पर कस सकते हैं।
10. 'शक्ति' के पी. शिवरामाकृष्ण की पहली उदयपुर यात्रा भारी वर्षा से प्रभावित रही; इस दौरान खेरवाड़ा व पानरवा गाँवों की यात्रा की गई किन्तु पानरवा के निकटवर्ती फलासिया एवं ओगणा गाँवों को नहीं जाया जा सका। फिर भी, जनजातियों के साथ ऐतिहासिक अन्याय की प्रक्रिया को ब्रिटिश काल से पहले के परिप्रेक्ष्य में भी समझने में इस यात्रा का उपयोग किया गया।
11. ऐसा क्यों है कि जिन जनजातियों ने महाराणा प्रताप को जंगल में जीवित रखा, उन्हें अब भी राजपूतों व वन विभाग के सामने झुककर दोहरा होना पड़ता है।
12. गाँवों का ऐतिहासक मानचित्रण करने की प्रक्रिया के तहत गाँव के हर इलाके के स्थानीय नामों का वर्णन किया गया और इस तरह इतिहास को फिर से अपने पैरों पर खड़ा किया गया। जिस वन पर

लोग निर्भर थे उसका भी सीमांकन और मानचित्रण इसी प्रक्रिया से किया गया। इसके पश्चात यह दिखाया गया कि सामान्यतः वन अधिकारों की स्वीकृति और विशेषकर सी.एफ.आर. का सम्बन्ध इस बात से है कि लोग क्या जानते हैं, लोग क्या स्वीकार करते हैं और वे अपनी आजीविका के लिए किसपर निर्भर हैं। इसका प्रमाण उन्हीं के प्रारूप में होगा।

13. हमारा पड़ौसी कौन है? उत्तर, दक्षिण, पूर्व, पश्चिम और खेत के कोनों पर, यानी कि गाँव का आठ–आयामी सीमांकन। तत्पश्चात, गाँव के भीतर 'सम्पत्ति' को इन आठ रेखाओं के सन्दर्भ में चिह्नित किया गया जो कि बैठक के स्थल को केन्द्रबिन्दु मानकर बनाई गईं। इस प्रक्रिया में गाँव के वन को चिह्नित किया गया तथा इसकी सीमाओं व इसके भीतर की 'सम्पत्ति' का निर्धारण उपर्युक्त वर्णित प्रक्रिया से किया गया। यह स्पष्ट किया गया कि अधिनियम इस बारे में है कि जनजातियों के लोग क्या जानते हैं और किस प्रकार वन पर निर्भर हैं तथा यह प्रक्रिया उन्हीं की शैली में इसका प्रमाण प्रदान करती है।
14. इस प्रक्रिया के आधार पर प्रारूप को भरने का कार्य आई.ई.एल.ए. द्वारा सहज किया जाएगा। अधिकारों की औपचारिक स्वीकृत को सहज करने के लिए क्षेत्र के अन्य संगठनों एवं यूनियनों से जुड़ाव की प्रक्रिया भी साथ ही साथ चलाई जाएगी।
15. सी.एफ.आर. के राजनीतिक निहितार्थों पर डॉ. सुनील दुबे की रिपोर्ट को भी साझा किया गया।
16. क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी मिली–जुली रहीः

क. खेरवाड़ा और पानरवा में मुख्यतः महिलाएँ बैठक का हिस्सा थीं और उन्होंने ही जानकारियाँ उपलब्ध कराईं। पुरुष उन जानकारियों में कुछ और जोड़ने, स्थलों की पुष्टि करने या महिलाओं के ही प्रश्नों को सहज करके चर्चा को आगे बढ़ा रहे थे।

ख. हालाँकि सरिस्का में महिलाएँ, पुरुषों के साथ हुई चर्चा का हिस्सा नहीं थीं, किन्तु उनके साथ अलग से सत्र किए गए जिनमें करीब 8–10 महिलाओं ने भाग लिया। महिलाओं के साथ अलग से सत्र करना उनकी भागीदारी को सुनिश्चित करने की एक प्रविधि है।

17. 'कृपाविस' द्वारा नैचुरल जस्टिस के साथ एक अलग कार्यशाला में पारिस्थितिकीय पंचांगों (ईको कैलेण्डर) के माध्यम से संसाधनों के दस्तावेज़ीकरण की सहभागी गतिविधि की गई, जिससे निम्नलिखित जानकारियाँ प्राप्त हुईंः

1. वर्ष भर अलग–अलग मौसमों में जंगल से मिलने वाले उत्पादों का वर्णन करता वार्षिक पंचांग।
2. मवेशियों पर वन्य जीवों के हमले से प्रभावित परिवार।
3. गाँव की सीमाओं के पार उपयोगकर्ता के अधिकार की प्रकृति।

क. नमूने के तौर पर चयनित सभी गाँवों में यह अभ्यास किया गया; वहाँ अपनाई गई पद्धति निम्नलिखित हैः

(i) वन अधिकार अधिनियम के प्रासंगिक इतिहास की संक्षिप्त प्रस्तुति जिसमें वन में निवास करने वालों के साथ हुए ऐतिहासिक अन्याय को उजागर करने के साथ ही बताया गया कि वन विभाग की स्थापना वनों के संरक्षण के लिए नहीं अपितु उनके वाणिज्यिक दोहन के लिए हुई थी।

(ii) कानूनों व नीतियों के विकास पर नज़र डालते हुए बताया गया कि संरक्षण के कानूनों और नीतियों में यह स्वीकार किया जाने लगा कि स्थानीय समुदायों के सहयोग के बिना वनों का संरक्षण सम्भव नहीं है। अब इस प्रक्रिया को पलटा जा रहा है।

(iii) डॉ. सुनील दुबे की रिपोर्ट का सार–संक्षेप बताते हुए यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया गया कि विगत नौ वर्षों में देश में केवल 4 प्रतिशत भूमि और राजस्थान में तो मात्र 0.8 प्रतिशत भूमि ही स्वीकृत की गई।

(iv) इस कानून व अन्य कानूनों में अन्तर स्पष्ट किया गया। यह कानून मान्यता देने के सम्बन्ध में है; अतः यह इस बारे में है कि लोग क्या जानते हैं, किसका उपयोग करते हैं, इत्यादि। सरकार द्वारा कानून का अक्षरशः पालन नहीं करने का कारण, और इसलिए समुदायों को अधिनियम के सन्दर्भ में स्वयं अपना दस्तावेज़ीकरण करने की आवश्यकता के प्रसंग में इस ओर इंगित किया गया।

(v) मुख्य प्रक्रिया लोगों के ज्ञान के अनुसार मानचित्रण करने की थी।

- आरम्भ में सादे काग़ज़ पर उत्तर, दक्षिण, पूर्व एवं पश्चिम को चिह्नित किया गया। जिस स्थल पर बैठक हो रही थी उसे केन्द्र में रखा गया।
- पूर्व से शुरू करते हुए निम्नलिखित को दर्ज किया गयाः
  1. पड़ौसी गाँव।
  2. सीमा का देवता/देवी (सीमा पर मौजूद स्थल का नाम)।
  3. सीमा से केन्द्र की ओर सीधी रेखा में सभी स्थल। इनमें नदी–नाले, सड़कें, छोटी पहाड़ियाँ, मन्दिर/देवरे, स्मृति पत्थर आदि। उनके स्थानीय नाम के साथ वन, कृषि, चरवाही आदि की स्थिति को दर्ज किया गया।

(vi) यही प्रक्रिया उत्तर, पश्चिम व दक्षिण के लिए भी दोहराई गई। नक्शे को भौगोलिक स्थिति में रखा गया और तदनुसार दर्ज किया गया।

(vii) इसके बाद, इसी प्रक्रिया से चारों कोनों को दर्ज किया गया, यानी कि गाँव के पड़ौस का आठ–पक्षीय निर्धारण किया गया। यह भी समझाया गया कि इसी प्रक्रिया से पड़ौस के भूखण्डों को भी दर्ज किया जा सकता है।

(viii) एक बार यह कार्यविधि पूर्ण होने के बाद क्या पाया गया, उसका उपयोग किसलिए हो रहा था आदि को जानने की प्रक्रिया शुरू की गई। समय–सीमा के कारण यह विस्तार से पूर्ण नहीं किया जा सका।

(ix) फिर, चेन्चस द्वारा बनाए गए नक्शे लोगों को बताए गए। उनका ध्यान इस ओर आकृष्ट किया गया कि नक्शों में मोर के घोंसलों का विवरण और बाघिन द्वारा शावकों के जन्म का स्थल भी दर्ज किए गए थे।

18. नैचुरल जस्टिस ने प्रादेशिक मानचित्रण की सीमाओं के बारे में बताया। उदाहरण के लिए, चरवाहे अपनी सीमाओं से कहीं दूर तक जाते हैं। ऐसी ही समस्या का सामना सुन्दरबन के मछुआरों को भी

करना पड़ता है। इन मुद्दों का सामना कैसे किया जाए इसपर हम अलवर में 'कृपाविस' और सुन्दरबन में 'दिशा' के साथ काम कर रहे हैं।

19. क्षेत्र के नमूने के तौर पर चयनित गाँवों के लिए जनगणना विभाग द्वारा तैयार किए गए ग्राम सर्वेक्षण विनिबन्ध भी प्राप्त किए गए। इस प्रक्रिया के माध्यम से क्षेत्र का वर्णन (जहाँ तक सम्भव हो पाया) और सांस्कृतिक प्रथाओं की जो जानकारी लोगों द्वारा दी गई थी उसका सत्यापन किया गया। लोगों द्वारा किए गए दावों की पुष्टि करने के लिए हम अन्य सरकारी साक्ष्यों को भी देख रहे हैं। ऐसा करने की प्रक्रिया चेन्चु वर्ल्ड बुक में वर्णित है और हम उसे राजस्थान में दोहराने का प्रयास कर रहे हैं। आई.ई.एल.ए. इस समस्त प्रक्रिया का समन्वय करेगा।

## 4.3 उदयपुर

### 4.3.क नमूने के तौर पर चयनित गाँव[42,43]

वर्तमान कार्य की पहुँच 53 बसावटों, जिनमें 9 फले (गाँव में बसावट के समूह) शामिल हैं, एवं 44 राजस्व गाँवों तक रही जो उदयपुर ज़िले की 19 ग्राम पंचायतों में आते हैं। प्रशासनिक तौर पर ये झाड़ौल (फलासिया) तहसील की झाड़ौल पंचायत समिति के अन्तर्गत आते हैं। इनमें कुल घर 6532 हैं जबकि आबादी 31292 है, जिनमें 70.9 प्रतिशत अनुसूचित जनजाति के लोग हैं। अनुलग्नक 14 एवं 15 में गाँवों का विवरण एवं ग्राम पंचायतवार सूची दी गई है।

वन विभाग के दस्तावेज़ों के अनुसार 20 गाँव फुलवारी की नाल वन्य जीव अभयारण्य के भीतर स्थित हैं जबकि 33 गाँव परिधि क्षेत्र (प्रभाव क्षेत्र) में हैं।

सेवा मन्दिर ने 2012–13 में 11 गाँवों के लिए सामुदायिक वन अधिकार के दावे पेश किए थे, जो कि डी.एल.सी. स्तर पर लम्बित बताए जाते हैं।

### 4.3.ख बसावटों की जी.पी.एस. अवस्थिति[44]

जी.पी.एस. द्वारा बसावटों व संसाधनों के चिह्नीकरण के सहभागी अभ्यास के दौरान दर्ज किए गए डाटा की तालिकाएँ बनाई गईं एवं नमूने के तौर पर चयनित गाँवों की अवस्थिति के विवरण को निर्धारित किया गया। उदयपुर में आर.एम.के.यू. के दो जनजातीय सहयोगियों, जो कि नमूने के तौर पर चयनित गाँवों के ही निवासी हैं, को क्षेत्र में संचालित समस्त प्रक्रियाओं में सम्मिलित किया गया। उन्होंने गाँव में बैठकों के दौरान लोगों को यह समस्त अभ्यास समझाने में भी मदद की। नमूने के तौर पर चयनित गाँवों के आसपास 19 वन खण्ड हैं, और इनकी कुल भूमि करीब 47160.29 हैक्टर है। 6 खण्ड फुलवारी की नाल वन्य जीव अभयारण्य का हिस्सा हैं।

### 4.3.ग तहसील एटलस में गाँवों का चिह्नीकरण[45]

एक अन्य अभ्यास में सम्बन्धित तहसील के प्रशासनिक एटलस नक्शों में नमूने के तौर पर चयनित गाँवों को चिह्नित किया गया। उदयपुर के मामले में सभी गाँव झाड़ौल तहसील के अन्तर्गत हैं इसलिए उनका चिह्नीकरण

---

42 अनुलग्नक–14 (उदयपुर ज़िले में नमूने के तौर पर चयनित गाँवों का विवरण).
43 अनुलग्नक–15 (उदयपुर ज़िले में नमूने के तौर पर चयनित गाँवों की पंचायतवार सूची).
44 अनुलग्नक–16 (उदयपुर में नमूने के तौर पर चयनित गाँवों एवं उनकी पहुँच वाले वन खण्डों की जी.पी.एस. अवस्थिति).
45 अनुलग्नक–17 (उदयपुर की झाड़ौल तहसील के प्रशासनिक एटलस नक्शे में नमूने के तौर पर चयनित गाँवों का वितरण).

अलग–अलग रंगों में किया गया जिससे तहसील के नक्शें में उनके स्थानिक गुणों को उजागर किया जा सके।

### 4.3.घ भू–उपयोग

नमूने के तौर पर चयनित गाँवों का कुल भौगोलिक क्षेत्र 23051.14 हैक्टर है जबकि कुल राजस्व भूमि का 59.57 प्रतिशत वन भूमि है (देखें रेखाचित्र–4)। वन भूमि का वैधानिक स्वामित्व वन विभाग के पास है। भू–उपयोग का विवरण तालिका–3 में दिया गया है।

**तालिका–3: उदयपुर ज़िले के नमूने के तौर पर चयनित गाँवों में भू–उपयोग**

| श्रेणी | क्षेत्र (हैक्टर में) |
|---|---|
| वन भूमि | 13731.81 |
| अकृषि कार्यों में प्रयुक्त क्षेत्र | 1074.27 |
| बंजर एवं परती भूमि | 1211.45 |
| स्थाई चारागाह एवं अन्य चरवाही भूमि | 460.22 |
| विविध प्रकार के वृक्षों की फसल वाली भूमि | 18.96 |
| सम्भावित कृषि योग्य बंजर भूमि | 715.02 |
| वर्तमान में बिना जोते छोड़ी गई भूमि के अलावा परती भूमि | 1034.09 |
| वर्तमान में बिना जोते छोड़ी गई भूमि | 1192.32 |
| बुवाई का कुल क्षेत्र | 3613 |
| **कुल** | **23051.14** |

सर्वप्रमुख कृषि उत्पाद मक्का है, जिसके बाद क्रमशः गेहूँ, बाजरा, ग्वार, चना व चावल हैं। निर्मित उत्पादों में रस्सी, घी व मिट्टी के बर्तन बनाना शामिल है। बुवाई के कुल क्षेत्र का लगभग 80 प्रतिशत असिंचित है।

### 4.3.च पशुधन

नमूने के तौर पर चयनित गाँवों में लगभग 15000 पशुधन है, जिसमें गाय, भैंस तथा बकरी व भेड़ शामिल हैं। सर्वाधिक पशुधन बकरी व भेड़ का है क्योंकि माँस के बाज़ार में उनकी बिक्री वाणिज्यिक आय का स्रोत है।

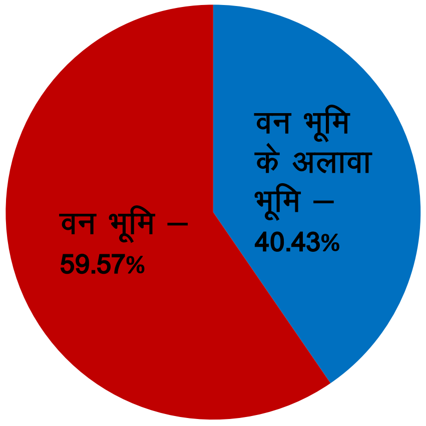

**रेखाचित्र–4:** उदयपुर के नमूने के तौर पर चयनित गाँवों में कुल भू–उपयोग व वन भूमि का अनुपात।

### 4.3.छ संसाधनों का उपयोग

जैसा कि वन विभाग के दस्तावेज़ों से स्पष्ट है कि झाड़ौल क्षेत्र के लोग न केवल आजीविका के लिए अपितु अपनी रोज़मर्रा की ज़रूरतों के लिए भी वन–संसाधनों पर बहुत अधिक निर्भर हैं। वन के भीतर अथवा बाहर दोनों ही तरह के गाँवों के लोग वन से प्राप्त संसाधनों पर कमोबेश समान रूप से निर्भर हैं।

नमूने के तौर पर चयनित गाँवों के सन्दर्भ में बात करें तो इन 53 गाँवों की पहुँच में 19 वन खण्डों का 47160.29 हैक्टर क्षेत्र आता है। प्रत्येक वन खण्ड में पहुँच एक जैसी नहीं है; इसे गाँवों एवं वन खण्डों दोनों के वितरण एवं अनुस्थापन से समझा जा सकता है।[46] कुछ वन खण्डों पर बहुत अधिक दबाव है क्योंकि उन तक बहुत अधिक संख्या में गाँवों की पहुँच है जबकि कुछ अन्य वन खण्डों पर दबाव कम है क्योंकि उन तक इतने अधिक गाँवों की पहुँच नहीं है।

जो जानकारी एकत्र की गई उससे ऐसा प्रतीत होता है कि अदिवास वन खण्ड पर 15 गाँवों से संसाधनों की माँग का बहुत अधिक दबाव है। इस वन खण्ड का क्षेत्र लगभग 2501 हैक्टर है किन्तु इस पर अन्य बड़े वन खण्डों की तुलना में कहीं अधिक दबाव है, जैसे कि देवली (पी.के.एन.) वन खण्ड का क्षेत्र 5340 हैक्टर है और वहाँ 11 गाँवों की पहुँच है, या धारावन (पी.के.एन.) वन खण्ड का क्षेत्र 2429 हैक्टर है किन्तु यहाँ 6 गाँवों की ही पहुँच है, और ऐसा ही अन्य मामलों में भी है। इन गाँवों की जनसंख्या का समानुपात भी इसी अनुपात में है।

### 4.3.ज सहभागी मानचित्रण

इस सम्पूर्ण अभ्यास का सर्वप्रमुख भाग गाँवों के संसाधनों का सहभागी मानचित्रण था। इसके लिए, प्रारम्भ में, हर गाँव में अनौपचारिक बैठकें की गईं। इस पूरी प्रक्रिया के दौरान आर.एम.के.यू. के दो जनजातीय कार्यकर्ता सदैव साथ रहे। उन्हें चर्चा शुरू करने और उसके बाद गाँववासियों को संसाधनों का नक्शा बनाने में सम्मिलित करने का प्रशिक्षण दिया गया था। स्थानीय लोगों को पूर्ण स्वतन्त्रता दी गई थी कि वे अपने देशज अनुभव से स्वयं यह तय करें कि वे अपने गाँव के भीतर और इर्दगिर्द किस प्रकार के संसाधनों को दर्शाना चाहेंगे। इसी सहभागी अभ्यास के माध्यम से संसाधनों के कुल 53 नक्शे बनाए गए।

### 4.3.झ एफ.आर.ए. के दावों की समीक्षा

वर्तमान अभ्यास में, ग्राम स्तरीय बैठकों के दौरान 13 गाँवों में 250 से अधिक दावों की जानकारी प्राप्त हुई। बताया गया कि इनमें से 42 दावे पिछले दो वर्ष से अधिक समय से एस.डी.एल.सी. स्तर पर लम्बित हैं। यह प्रक्रिया जारी है।

उदयपुर में, नमूने के तौर पर चयनित गाँवों में सी.एफ.आर. की प्रक्रिया अभी प्रारम्भिक अवस्था में है तथा आगे और सहज करने के साथ ही सूची में अधिक संख्या में गाँव जुड़ेंगे।

आई.एफ.आर. का दावा करने वालों को सूचीबद्ध करने का काम नमूने के तौर पर चयनित गाँवों के साथ ही अन्य गाँवों में भी चल रहा है; इनमें वे भी शामिल हैं जिन्होंने दावा पेश कर दिया है और वे भी जो दावा करने के इच्छुक हैं व दावा तैयार कर रहे हैं। यह अभ्यास दावा करने के इच्छुक लोगों व गाँववार वर्तमान दावेदार एवं अस्वीकृत दावों की आधारभूत दत्त–सामग्री (डाटा) तैयार करने के लिए किया जा रहा है जिससे कि सहज करने के लिए एक तन्त्र की कार्ययोजना तैयार की जा सके।

### 4.3.ट नमूने के तौर पर चयनित गाँवों में से विशेष रूप से ध्यान–केन्द्रित गाँव

प्रायोगिक तौर पर, नमूने के तौर पर चयनित गाँवों में से गेजवी ग्राम पंचायत के पाँच गाँवों– गलदर, गेजवी, हीरूमाला, गामरी, व जेटीवाड़ा में वन भूमि पर रहने/स्वामित्व वालों को, भूमि के स्थानिक विवरणों एवं सम्बन्धित राजस्व/भूमि दस्तावेज़ों के विवरणों सहित सूचीबद्ध किया जा रहा है। इन गाँवों में वन भूमि पर

---

46 अनुलग्नक–18 (उदयपुर के नमूने के तौर पर चयनित गाँवों में साझा पहुँच वाले वन खण्ड एवं गाँव).

निवास करने वालों का प्रारम्भिक सूचीकरण किया जा चुका है। इन पाँच गाँवों की वन अधिकार समितियों (एफ.आर.सी.) की आधिकारिक घोषणा हो चुकी है और लगभग 140 आई.एफ.आर. दावे (जमा/जमा करने के लिए तैयार/जमा करने के लिए तैयार किए जा रहे) बताए जा रहे हैं।

इन गाँवों का सार–संक्षेप निम्नलिखित है। गाँवों के कुल क्षेत्र के समानुपात में वन भूमि को रेखाचित्र–5 में दर्शाया गया है।

| | | |
|---|---|---|
| कुल आबादी | – | 3333 |
| अनुसूचित जनजाति की आबादी | – | 2861 (85.83 प्रतिशत) |
| कुल घर | – | 698 |
| मुख्य समुदाय | – | गरासिया |
| अवस्थिति | – | 3 गाँव (गामरी, हीरूमाला व जेटीवाड़ा) फुलवारी की नाल वन्य जीव अभयारण्य के भीतर तथा दो गाँव (गलदर व गेजवी) बाहर हैं। |
| कुल क्षेत्र | – | 3635 हैक्टर |
| वन भूमि | – | 2780 हैक्टर |

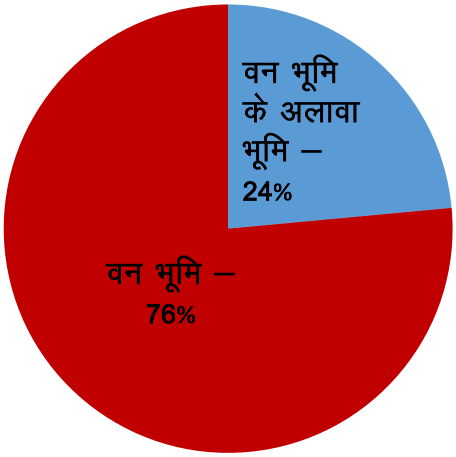


**रेखाचित्र–5:** उदयपुर के नमूने के तौर पर चयनित गाँवों में से विशेष रूप से ध्यान–केन्द्रित गाँवों में कुल भू–उपयोग के समानुपात में वन भूमि।

ग्राम समुदाय की पहुँच वन खण्डों हरवा (पी.के.एन.), देवली (पी.के.एन.), रायदारी, रामकुण्डा व कंकरमल में है। वन खण्डों में पहुँच का कुल क्षेत्र 12501.33 हैक्टर है।

## 4.4 अलवर

### 4.4.क नमूने के तौर पर चयनित गाँव[47]

अलवर में नमूने के तौर पर गाँवों के चयन का क्षेत्र 'कृपाविस' से परामर्श करके चुना गया तथा अन्ततः 5 गाँव – कलिखोल, बेरा (रून्ध कलिखोल), बीनाक, बख़्तपुरा व लोज–नाथुसर – चुने गए। बेरा और लोज (नाथुसर की एक इकाई) सरिस्का टाइगर रिज़र्व के भीतर (क्रिटिकल टाईगर हैबिटाट के कोर–II में) अवस्थित हैं जबकि शेष तीन एस.टी.आर. के बफर क्षेत्र में अवस्थित हैं। बेरा (रून्ध कलिखोल) आधिकारिक तौर पर निर्जन वन ग्राम के रूप में दर्ज है और यह भू–उपयोग के दस्तावेज़ से भी स्पष्ट होता है।

नमूने के तौर पर चयनित गाँवों की कुल आबादी 3248 है जो 549 घरों में निवास करती है। समुदाय में अधिकतर गुर्जर हैं और कुछ जाट हैं जबकि अनुसूचित जनजाति की आबादी नहीं है। लोग दो मुख्य आवश्यकताओं के लिए वन पर बहुत अधिक निर्भर हैं– चरवाही और ग़ैर इमारती लकड़ी वन उत्पाद। पशुपालन समुदाय की मुख्य आजीविका है और चारागाहों को बदलने का उनका अपना मौसमी ढंग है।

स्वतन्त्रता से पूर्व हुए बन्दोबस्तों के दस्तावेज़ों से इन गाँवों की ऐतिहासिक मौजूदगी स्थापित होती है। उदाहरण के लिए, तीसरे बन्दोबस्त के पुनरीक्षण के समय 1937[48] में राजस्व भू–क्षेत्र वन भूमि को हस्तान्तरित किए गए थे। इनमें बख़्तपुरा का 142.6 हैक्टर, नाथुसर का 525.35 हैक्टर, कलिखोल का 403.43 हैक्टर और लोज का 58.43 हैक्टर क्षेत्र शामिल है, इस प्रकार कुल 1129.8 हैक्टर क्षेत्र वन विभाग को हस्तान्तरित किया गया था।

इसके साथ ही बीनाक में ऐतिहासिक अवशेष और अपनी विरासत के प्रति समुदाय का सम्मान इन अवशेषों की देखभाल से स्पष्ट होता है (यद्यपि अब भी बीनाक को एक स्वतन्त्र राजस्व गाँव के तौर पर स्वीकार नहीं किया जाता है; इसका एक हिस्सा देहलावास गाँव और अधिकतर हिस्सा बख़्तपुरा में शामिल है)।

### 4.4.ख बसावटों की जी.पी.एस. अवस्थिति[49]

अलवर में, अवस्थिति के सहभागी जी.पी.एस. चिह्नीकरण के कार्य को 'कृपाविस' के कार्यकर्ताओं ने सहज बनाया एवं इस पूरी प्रक्रिया में स्थानीय गाँववासी सम्मिलित रहे। नमूने के लिए चयनित गाँव 5 वन खण्डों के बिलकुल आसपास हैं और उनकी भूमि कुल मिलाकर लगभग 10646.46 हैक्टर है।

### 4.4.ग तहसील एटलस में गाँवों का चिह्नीकरण[50,51]

नमूने के तौर पर चयनित गाँवों को प्रशासनिक एटलस नक्शों में चिह्नित किया गया। लोज–नाथूसर गाँव बानसूर तहसील का हिस्सा है, जबकि अन्य सभी गाँव अलवर तहसील में शामिल हैं।

### 4.4.घ भू–उपयोग

नमूने के तौर पर चयनित गाँवों का कुल भू–क्षेत्र 7548 हैक्टर है, जबकि कुल राजस्व भूमि का 87.32 प्रतिशत हिस्सा वन भूमि है (देखें रेखाचित्र–6)। भू–उपयोग का विवरण तालिका–4 में दिया गया है।

---

47 अनुलग्नक–19 (अलवर ज़िले में नमूने के तौर पर चयनित गाँवों का विवरण).
48 मियाँ उदय सिंह द्वारा तैयार की गई 'फॉरेस्ट सैटलमैण्ट रिपोर्ट ऑफ अलवर स्टेट, 1937'.
49 अनुलग्नक–20 (अलवर में नमूने के तौर पर चयनित गाँवों एवं उनकी पहुँच वाले वन खण्डों की जी.पी.एस. अवस्थिति).
50 अनुलग्नक–21 (अलवर ज़िले की अलवर तहसील के प्रशासनिक एटलस नक्शे में नमूने के तौर पर चयनित गाँवों का वितरण).
51 अनुलग्नक–22 (अलवर ज़िले की बानसूर तहसील के प्रशासनिक एटलस नक्शे में नमूने के तौर पर चयनित गाँवों का वितरण).

| तालिका–4: अलवर ज़िले के नमूने के तौर पर चयनित गाँवों में भू–उपयोग | |
|---|---|
| **श्रेणी** | **क्षेत्र (हैक्टर में)** |
| वन भूमि | 6591 |
| अकृषि कार्यों में प्रयुक्त क्षेत्र | 230 |
| बंजर एवं परती भूमि | 60 |
| स्थाई चारागाह एवं अन्य चरवाही भूमि | 70 |
| विविध प्रकार के वृक्षों की फसल वाली भूमि | 0 |
| सम्भावित कृषि योग्य बंजर भूमि | 58 |
| वर्तमान में बिना जोते छोड़ी गई भूमि के अलावा परती भूमि | 106 |
| वर्तमान में बिना जोते छोड़ी गई भूमि | 82 |
| बुवाई का कुल क्षेत्र | 351 |
| **कुल** | **7548** |

कुल वन भूमि का करीब 97 प्रतिशत बेड़ा और नाथूसर में आता है।

कृषि उत्पादों में मुख्यतः गेहूँ व सरसों और उनके बाद बाजरा है। बुवाई के कुल क्षेत्र का करीब 58 प्रतिशत असिंचित है।

### 4.4.च पशुधन

गाँवों में सभी प्रकार के मवेशी (गाय, बैल, भैंस, बकरी, भेड़) हैं। चराई के लिए मवेशियों को खुले में छोड़ने की व्यवस्था है और कुछ ही जगह बाड़े में आहार दिया जाता है। नमूने के तौर पर चयनित गाँवों में 400 से अधिक मवेशी हैं, जिनमें अधिक संख्या भैंसों की है।

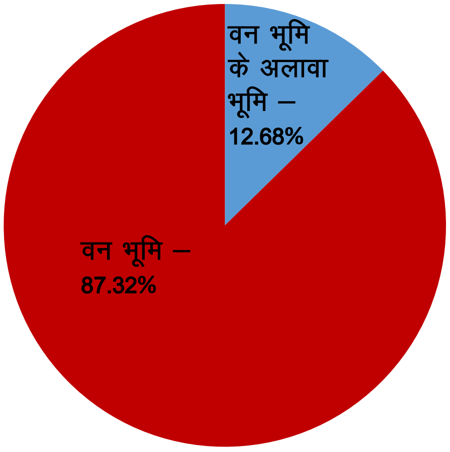

**रेखाचित्र–6:** अलवर के नमूने के तौर पर चयनित गाँवों में कुल भू–उपयोग के समानुपात में वन भूमि।

### 4.4.छ सहभागी मानचित्रण

'कृपाविस' ने नैचुरल जस्टिस की टीम के साथ सहभागी मानचित्रण किया।

संसाधनों के नक्शे बनाने के अलावा लोगों ने मौसम में परिवर्तन के साथ ही वन–संसाधनों तक पहुँच में होने वाले परिवर्तनों को दर्शाते हुए पारिस्थितिकी पंचांग (ईको कैलेण्डर) बनाने में भी सक्रिय भागीदारी निभाई। उन्होंने अपने गाँवों की पारम्परिक सीमाएँ और थल–चिह्नों (लैण्डमार्क) को दर्शाया और राजस्व नक्शे के साथ अपने गाँव की पारम्परिक सीमाओं की तुलना की।

### 4.4.ज एफ.आर.ए. के दावों की समीक्षा

यद्यपि 'कृपाविस' द्वारा सहजकर्ता की भूमिका निभाने से वन अधिकार समितियों (एफ.आर.सी.) का गठन हो गया है किन्तु इसे आगे बढ़ाने में सरकारी अधिकारियों की कोई रुचि नहीं है। अपितु सरकारी अधिकारी तो

अनुसूचित क्षेत्र एवं सरिस्का टाइगर रिज़र्व में एफ.आर.ए. लागू होने से ही इनकार कर रहे हैं। उनकी योजना 29 गाँवों को (यदि स्वेच्छा से नहीं तो जबरन) बेदख़ल करने की है तथा बेड़ा (रून्ध कलिखोल) एवं लोज (नाथुसर) गाँव क्रमशः वर्ष 2015–16 एवं वर्ष 2017–18 में बेदख़ल किए जाने के लिए इस सूची में शामिल हैं।

हालाँकि 'कृपाविस' ने एफ.आर.ए. की प्रक्रिया को सहज किया है तथा नमूने के लिए चयनित इन गाँवों के लिए सी.एफ.आर. के दावे तैयार किए हैं, जो कि कुल 6852.17 हैक्टर भूमि के लिए हैं। दावा की जा रही भूमि का गाँववार विवरण निम्नलिखित हैः

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| 1. | कलिखोल | – | 66 | हैक्टर |
| 2. | रून्ध कलिखोल | – | 250 | हैक्टर |
| 3. | बख़्तपुरा | – | 149.64 | हैक्टर |
| 4. | रून्ध बीनाक | – | 5346.14 | हैक्टर |
| 5. | नाथुसर–लोज | – | 1040.39 | हैक्टर |
| | **कुल क्षेत्र जिसका दावा किया जाएगा** | **–** | **6852.17** | **हैक्टर** |

## 5. दोनों क्षेत्रों में अनुभव

### 5.1 उदयपुर – जनजातीय सन्दर्भ

– जहाँ जे.एफ.एम.सी. के सदस्यों को एफ.आर.सी. में नामित किया गया था वहाँ ग्राम सभा के स्तर पर बड़ी संख्या में दावे अस्वीकृत हुए (उदाहरण के लिए, उदयपुर में झाड़ौल)।

– उदयपुर ज़िले के झाड़ौल ब्लॉक में ग्राम सभा द्वारा अस्वीकृत दावों की संख्या असाधारण रूप से बहुत अधिक है (ग्राम सभा द्वारा प्राप्त कुल दावों का 47.61 प्रतिशत)। ज़िले के खेरवाड़ा व सलूम्बर ब्लॉक में ग्राम सभा के स्तर पर प्रस्तुत 10–20 प्रतिशत दावे अस्वीकृत किए गए जबकि शेष उपखण्ड ब्लॉक (कोटड़ा, सराड़ा, लसाड़िया, गिर्वा, गोगुन्दा, मावली एवं वल्लभनगर) में ग्राम सभा के स्तर पर पेश कोई भी दावा अस्वीकृत नहीं किया गया।

– **कोई नया दावा नहीं?** नवीनतम डाटा[52] की तुलना एक वर्ष पूर्व के डाटा[53] से करने पर पता चलता है कि ग्राम सभा में पेश किए गए दावों की संख्या में परिवर्तन केवल कोटड़ा व झाड़ौल तहसीलों में ही हुआ है जबकि अन्य तहसीलों में पेश किए गए दावों की संख्या में कोई परिवर्तन नहीं आया है! तहसीलवार विश्लेषण बिन्दु 2.4.ख में प्रस्तुत मान्यता की पुष्टि ही करते हैं।

– ऐसा प्रतीत होता है कि बड़ी संख्या में दावों के अस्वीकृत होने का यही प्रमुख कारण है (इसी लिए जुलाई 2014 से नवम्बर 2015 के बीच ग्राम सभा द्वारा प्राप्त दावों की ज़िला स्तरीय संख्या में कोई परिवर्तन नहीं आया है) और विशेषकर उदयपुर ज़िले में तो तहसीलवार स्थिति से यह साबित भी हो जाता है।

---

52 अनुलग्नक–23 (उदयपुर ज़िले में एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन की तहसीलवार प्रगति रिपोर्ट – जनवरी 2016).
53 अनुलग्नक–24 (उदयपुर ज़िले में एफ.आर.ए. के कार्यान्वयन की तहसीलवार प्रगति रिपोर्ट – अगस्त 2015).

- वर्ष 2000 के बाद से (जब संरक्षित क्षेत्र के वन तैयार होने लगे) जे.एफ.एम. को कमज़ोर करने के कारण संरक्षित क्षेत्र का विनाश होने लगा (अलवर व उदयपुर दोनों जगह)।
- नए दावों को स्वीकार करने से पंचायत सचिव और उपखण्ड स्तरीय समिति के अधिकारियों द्वारा इनकार किया जा रहा है। क्षेत्र के अधिकतर मामलों में पंचायत सचिव के द्वारा अपने स्तर पर ही फाइलों को रोक कर प्रक्रिया को बाधित किया जा रहा है।
- जी.पी.एस. आधारित सत्यापन का कोई सहभागी तरीका नहीं है और इस कारण दावा की कई भूमि से बहुत कम क्षेत्र के ही अधिकार–पत्र दिए जा रहे हैं।
- औसतन पाँच बीघा से भी कम भूमि स्वीकृत की जा रही है। दावा करने वालों को यह समझाया जा रहा है कि वे अधिक क्षेत्र का दावा ना करें अन्यथा अधिकारी पूरे दावे को ही विभिन्न आधारों पर अस्वीकार कर देंगे।
- यदि सी.एफ.आर. आ गया तो आई.एफ.आर. के लिए भूमि कम हो जाने की आशंका? – कुछ गाँवों (उदाहरण के लिए पीलक ग्राम पंचायत का कांकरमाला गाँव) में लोगों का सोचना था कि यदि सी.एफ.आर. की प्रक्रिया पहले हुई तो उसके बाद आई.एफ.आर. के लिए भूमि कम पड़ जाएगी।
- सरकारी अधिकारी लोगों को यह कहते हुए सी.एफ.आर. के दावे पेश करने से हतोत्साहित करते हैं कि पहले आई.एफ.आर. की प्रक्रिया पूरी की जाएगी और उसके बाद ही सी.एफ.आर. की प्रक्रिया शुरू होगी।
- जिनके पास आजीविका का स्थायी या अस्थायी सरकारी स्रोत है उन पर किसी भी प्रकार का दावा पेश नहीं करने के लिए दबाव बनाया जाता है। इतना ही नहीं, बल्कि यह भी बताया गया कि वन विभाग द्वारा ठेके पर कार्यरत/अंशकालिक/अस्थायी कर्मचारियों का इस्तेमाल लोगों को परेशान करने के लिए किया जाता है।
- वाकल नदी के ऊपरी बहाव क्षेत्र में, बिरोठी के निकट, प्रस्तावित मानसी–वाकल बाँध को लेकर भी लोगों में आशंका है। यद्यपि प्रस्तावित स्थल के निकटवर्ती गाँवों में लोगों ने संरक्षित वन क्षेत्र में अतिक्रमण किया हुआ है किन्तु वे उसका किसी भी उद्देश्य से उपयोग नहीं कर रहे हैं। उन्हें लगता है कि दावे की फाइल तैयार करने में धन का अनावश्यक व्यय करने (बिचौलियों को दलाली व घूस देने) के बजाय वे प्रस्तावित बाँध में गाँव के डूबने पर कानूनी मुआवज़ा मिलने के बाद अतिक्रमित भूमि पर बस जाना पसन्द करेंगे (भूमि के बदले भूमि!)।
- दावों की फाइलों (तैयार/तैयार की जा रही/जमा) की समीक्षा करने पर यह पाया गया कि अधिकतर मामलों में फाइलें अधूरी हैं– या तो सम्बन्धित व्यक्तियों के हस्ताक्षर नहीं हैं, या भूमि के विवरण या गवाही नहीं है या एक से अधिक कमियाँ हैं।
- यहाँ उल्लिखित गाँवों में फाइल तैयार करने में किसी प्रकार की सहायता उपलब्ध नहीं है। नागरिक समाज के स्थानीय संगठनों ने वन अधिकार अधिनियम के बारे में जागरूकता फैलाई है लेकिन फाइल तैयार करवाने का काम ठीक से नहीं हो रहा है।
- लोगों की कई धारणाओं को स्पष्ट करने में व नई जानकारियाँ देने में गाँव की बैठक और कार्योन्मुख मानचित्रण की प्रक्रिया मददगार साबित हुई है। उदाहरण के लिए, लोगों को व्यक्तिगत दावों के

सन्दर्भ में वन अधिकार अधिनियम का कुछ पता ज़रूर था, किन्तु सामुदायिक अधिकार (सी.आर.) और वन संसाधनों पर सामुदायिक अधिकार (सी.एफ.आर.) के बारे में कोई जानकारी नहीं थी। इसके अलावा, उन्हें यह पता नहीं था कि एफ.आर.ए. 'पट्टा' (स्वामित्व का दस्तावेज़) जारी करने के लिए नहीं है अपितु उन प्राकृतिक संसाधनों पर किसी के पारम्परिक अधिकारों की स्वीकृति के लिए है जिन पर पीढ़ियों से उसकी आजीविका निर्भर है।

### 5.2 अलवर – चारागाही सन्दर्भ

- सारा ध्यान विस्थापितों को मुआवज़ा के भुगतान वाले पुनर्वास पैकेज पर है। सरिस्का टाइगर रिज़र्व की ग्राम पुनर्वास योजना के अलावा एफ.आर.ए. की प्रक्रिया पर कहीं भी ध्यान नहीं दिया गया है।
- ज़िला कलेक्ट्री में कोई अभिलेख उपलब्ध नहीं हैं। राजस्व विभाग, वन विभाग एवं भू–अभिलेख विभाग में सम्भ्रम है। अन्ततः, ज़िला स्तरीय अधिकारियों ने कहा कि एफ.आर.ए. से सम्बन्धित मामले वन विभाग देखता है और ज़िला कलेक्ट्री में उनके पास कोई अभिलेख नहीं हैं।
- चरवाहा समुदाय के साथ समस्या यह है कि विभिन्न वन क्षेत्रों में अपनी पारम्परिक पहुँच (मौसम के अनुसार रेवड़ को एक से दूसरे स्थान पर ले जाने) को दर्शाने के लिए उनके पास कोई सबूत नहीं है।
- टाइगर रिज़र्व घोषित होने के बाद से सरकार द्वारा कई पारम्परिक अधिकारों को सीमित कर दिया गया। वन विभाग एवं गाँव के निवासियों के बीच वन संसाधनों तक पहुँच एवं उनके उपयोग के अधिकार को लेकर टकराव बना हुआ है।
- सरिस्का की बाघ संरक्षण योजना में यह बताया गया है कि वन अधिनियम और वन्य जीव संरक्षण अधिनियम के ऐलान के बाद से वन तक मुक्त पहुँच, गौण वन उत्पादों को इकट्ठा करने और चरवाही को प्रतिबन्धित किया गया है। किन्तु इसी दौरान पर्यटन सम्बन्धी सुविधाओं को बढ़ावा देने के साथ ही पर्यटकों की संख्या बढ़ती ही जा रही है जो कि धन देकर सुविधाएँ और सेवाएँ प्राप्त कर रहे हैं। स्थानीय समुदाय की यह धारणा बन चुकी है कि सरिस्का टाइगर रिज़र्व को पयर्टन एवं राजस्व कमाने के लिए बनाया गया है तथा उनके पारम्परिक अधिकार अब कोई मायने नहीं रखते हैं। पर्यटन के दबाव को भी सामने लाया गया है, जिसमें इस ओर भी संकेत है कि पार्क के उस क्षेत्र में भी पर्यटकों की आवाजाही बढ़ रही है जो केवल बाघ के लिए है और जहाँ जाना प्रतिबन्धित है। पर्यटक सफारी सरिस्का टाइगर रिज़र्व के 16 क्षेत्रों (बीट्स) के 155 हैक्टर से अधिक इलाके में संचालित होती हैं।[54]
- टाइगर रिज़र्व में औसत भू–स्वामित्व बहुत छोटे हैं, विशेषकर कोर एवं बफर ज़ोन में, किन्तु सीमा क्षेत्र के एवं बाहरी गाँवों में ये तुलनात्मक रूप से बड़े हैं।
- नई पीढ़ी को पारम्परिक सीमाओं एवं थल–चिह्नों (लैण्डमार्क) के बारे में मालूमात नहीं है और इसलिए वन संसाधनों तक पहुँच को लेकर पड़ौसी गाँवों में विवाद होते रहते हैं।
- वन भूमि एवं पवित्र कुंजों (देव भूमि) के अलावा अन्य सभी श्रेणियों की भूमि पर कब्ज़ा हो चुका है।

---

54 असेसमैण्ट ऑफ थ्रैट्स (अध्याय 3 में 3.4), ज़ोन प्लान फॉर ईको–टूरिज़्म (अध्याय 7 में 7.2.1.सी), टाइगर कन्ज़र्वेशन प्लान, सरिस्का टाइगर रिज़र्व (2014–15 से 2023–24), क्रमशः पृष्ठ 63–68 एवं 119–131.

- मौसम में परिवर्तन के साथ ही एक वन खण्ड से दूसरे वन खण्ड को चरवाहों का नियतकालीन स्थानीय प्रवास होता रहता है।
- गाँवों में उपलब्ध न्यूनतम अर्हत सामुदायिक वन अधिकार क्षेत्र 161904 हैक्टर है।

## दोनों क्षेत्रों में समान मुद्दे

1. पारम्परिक सीमाओं एवं साझा संसाधनों तक पहुँच को लेकर सामुदायिक विवाद, अतिक्रमण एवं अन्तरसामुदायिक प्रतिरोध (पुलिस में मामले दर्ज होना) होता है।
2. ग्राम सभा के स्तर पर दावों की अस्वीकृति का सम्भवतः एक प्रमुख कारण सामुदायिक विवाद हैं (झाड़ौल में अनुसूचित जनजाति और राजपूत सहित अन्य समुदायों के बीच विवाद, जो कि चयनित गाँवों में भी देखा गया है; झाड़ौल क्षेत्र की ग्राम सभाओं में दावों की स्वीकृति और अस्वीकृति दोनों की दर बहुत अधिक है)।
3. वन उत्पादों, जैसे कि महुआ का निजीकरण– लोगों ने महुआ के पेड़ों को आपस में बाँट लिया है और इस तरह अन्य लोगों की पहुँच को रोक दिया है।
4. स्थानीय निवासियों द्वारा किसी भी नए कब्ज़े का प्रतिरोध करने का एक कारण साझा संसाधनों की कमी और साझा भूमि पर अवैध कब्ज़े हैं।
5. गाँव की साझा भूमि पर नए लोगों के आ बसने/अतिक्रमण करने में अचानक बढ़ोतरी हुई है; वन में निवास करने वाले/जनजातीय समुदाय पलायन कर रहे हैं और गाँवों की साझा ज़मीन पर काबिज़ हो रहे हैं।
6. एक ही वन खण्ड पर भू–स्वामित्व के अधिकारों और एकाधिक राजस्व गाँवों के अधिकारों को लेकर अनिश्चितता है (उदाहरण के लिए, चयनित गाँवों के अभिलेखों के अनुसार उनका समीपस्थ वन खण्ड एक या दो या अधिक गाँवों के साथ साझे में है)।
7. सीमाओं का स्पष्ट चिह्नीकरण नहीं होने की वजह से विवाद होते हैं।
8. सुदूर क्षेत्रों के अतिक्रमी – दूर गाँवों के रहने वाले लोग वन के भीतरी क्षेत्रों पर मवेशियों के बाड़े, चारा एवं चारे के ढेर रखने के लिए दावा जताते हैं।
9. वंशजों को लगता है कि वे अपने पूर्वजों द्वारा कब्ज़ा की गई भूमि पर अपना अधिकार रखते हैं।

## भाविष्य की रणनीति

प्राथमिक रूप से जिन ज़िलों/क्षेत्रों पर ध्यान दिया जा रहा है, वे हैं:

क. जनजाति बहुत ज़िला – उदयपुर

ख. चरवाहा समुदाय – अलवर

कार्योन्मुख मानचित्रण की प्रक्रिया उदयपुर एवं अलवर ज़िलों में क्रमशः राजस्थान मज़दूर किसान यूनियन (जनजातीय इकाई) एवं 'कृपाविस'/ नैचुरल जस्टिस (चरवाहा समुदाय के साथ निकटता से कार्य करने वाली संस्था) ने की। पाली/राजसमन्द के मामले में अभी अधिक प्रगति नहीं हुई है। एक बार उदयपुर में प्रविधि की पुष्टि हो जाए, फिर आर.एम.के.यू. राजसमन्द/पाली में भी काम शुरू करेगी। उदयपुर में फुलवारी की

नाल और अलवर में सरिस्का में कार्य को आगे बढ़ाया जाएगा। पाली/राजसमन्द के लिए कुम्भलगढ़ वन्य जीव अभयारण्य का अध्ययन किया जाएगा। इस अभयारण्य का एक बड़ा भाग उदयपुर ज़िले में भी आता है।

अध्ययन की दृष्टि से आई.ई.एल.ए., जो कि आर.एम.के.यू. का मार्गदर्शन कर रहा है, प्रतापगढ़ ज़िले में स्थित सीतामाता वन्य जीव अभयारण्य तथा भरतपुर पक्षी विहार, केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान से सम्बन्धित मुद्दों को भी देख रहा है, किन्तु प्राथमिकताओं की दृष्टि से ये उपर्युक्त वर्णित क्षेत्रों के बाद लिए जाएँगे।

क. उदयपुर – जनजातीय सन्दर्भ

ख. अलवर – चारागाही सन्दर्भ

ग. पाली/राजसमन्द – एक तरफ तो मरुस्थलीय पारिस्थितिकी की ओर अवस्थान्तर और दूसरी तरफ खनन का प्रभाव

अलवर एवं पाली में अध्ययन के लिए ईको–टूरिज़्म के मुद्दे को भी लिया जाएगा। अतः, सीतामाता एवं केवलादेव से उस पद्धति की पुष्टि होगी जो उपर्युक्त वर्णित वर्गीकरणों से निकलकर आएगी।

आई.ई.एल.ए. यह विश्लेषण कर रहा है कि जंगल कहाँ हैं तथा विभिन्न प्रकार के जंगलों एवं जलवायु विज्ञान पर आधारित आजीविकाओं के स्वरूप क्या हैं। तत्पश्चात् उन व्यष्टि अध्ययनों (केस स्टडीज़), जिन्हें प्रमुखता से सामने लाया गया है, के साथ इसका आगे और विश्लेषण किया जाएगा। जिन क्षेत्रों का अध्ययन किया जा रहा है उनसे सम्बन्धित नवीनतम वन कार्ययोजनाओं और वन्य जीव प्रबन्धन योजनाओं का विश्लेषण किया जाएगा।

विश्लेषण को जन संगठनों के ज्ञान एवं विशेषज्ञता का साथ प्रदान करवाया जाएगा। जन संगठनों को भी मानचित्रण एवं सामुदायिक लामबन्दी की प्रक्रियाओं के माध्यम से इस विषय से जुड़े मुद्दों के बारे में शिक्षित किया जाएगा। यह प्रक्रिया कार्यान्वित होने के बाद नवम्बर/दिसम्बर में राज्य स्तरीय बैठक का आयोजन किया जाएगा, जिसमें यह देखने की कोशिश होगी कि सम्पूर्ण राज्य के स्तर पर इसका प्रभाव कैसे हो। साथ ही फरवरी में प्रस्तावित राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र व मध्य–प्रदेश की क्षेत्रीय बैठक के लिए यह एक तैयारी बैठक भी होगी।

वर्तमान में आर.के.एम.यू. (जनजातीय इकाई) और सरिस्का के भीतर एवं आसपास के चरवाही संगठन आई.ई.एल.ए., 'कृपाविस' व नैचुरल जस्टिस के सहयोग से बैठक का आयोजन करेंगे। नैचुरल जस्टिस कच्छ ज़िले में सहजीवन संस्था के साथ एफ.आर.ए. एवं बन्नी घास के मैदानों में सम्बन्धित चारागाही मुद्दों पर भी कार्यरत है।

## अभिवृद्धि के लिए रणनीति

- सामुदायिक वन अधिकार के दावे तैयार करने में लोगों को सक्रिय सहयोग दिया जाएगा। जिस क्षमता का निर्माण किया जा चुका है उसका उपयोग एक ओर राजस्थान मज़दूर किसान यूनियन के सहयोग से दक्षिणी राजस्थान के छह जनजाति बहुल ज़िलों में तथा दूसरी ओर चरवाही ज़िले अलवर में 'कृपाविस' के साथ कार्य की अभिवृद्धि में किया जाएगा। सरिस्का, अलवर में जो सामने आ रहा है उसके सन्दर्भ में बन्नी में उभर रहे मॉडल की पड़ताल भी की जाएगी।
    - प्रशिक्षण, सीमांकन और जी.पी.एस. व जी.आई.एस. का उपयोग करते हुए मानचित्रण।

– अस्वीकृत दावों को पुनः तैयार करवाया जाएगा।

– नागरिक समाज के स्थानीय संगठनों को सम्मिलित करते हुए या आई.ई.एल.ए. के माध्यम से एफ. आर.सी. का क्षमतावर्द्धन एवं उन्मुखीकरण किया जाएगा।

– जी.पी.एस. व जी.आई.एस. ('वसुन्धरा' संस्था द्वारा जी.आई.एस. सहयोग) का उपयोग करते हुए स्वीकृत दावों के भू–क्षेत्र का सीमांकन/अन्तिम मानचित्रण किया जाएगा।

– मानचित्रण एवं जी.आई.एस. का उपयोग करते हुए सम्भावित गाँवों का चिह्नीकरण किया जाएगा।

– एस.एल.एम.सी. द्वारा नियमित निगरानी रखने एवं जनजाति मामलों के मन्त्रालय को राज्य स्तरीय रिपोर्ट का सत्यापन करने के लिए प्रयास किया जाएगा।

– राज्य स्तरीय डाटा को समयबद्ध रूप से संकलित एवं व्यवस्थित करने के लिए सरकार की नोडल एजेन्सियों के साथ प्रयास किया जाएगा।

– स्वीकृत दावों का मानचित्रण एवं सीमांकन करने के साथ ही दावा की गई भूमि का स्थानिक सत्यापन किया जाएगा।

– एफ.आर.ए. के सन्दर्भ में अ.जा. एवं ज.जा. (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 2015 के निहितार्थों की समझ बनाई जाएगी।

– आगामी रणनीति में सीमाओं के नक्शों के डिजिटलीकरण (एटलस/राजस्व नक्शों को स्थलाकृतिक नक्शे व गूगल मैप पर अधिव्याप्त करने) का कार्य किया जाएगा।

•